Year 20, Issue 79
July-Sept., 2023

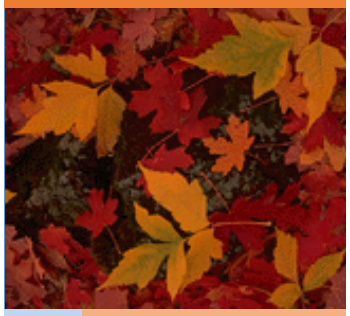

VASUDHA A CANADIAN PUBLICATION

FOUNDER-EDITOR-PUBLISHER : Dr. Sneh Thakore
Awarded By The President Of India

कैनेडा से प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका

वसुधा

संस्थापक, सम्पादक व प्रकाशक

डॉ. स्नेह ठाकुर

भारत के राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत

वर्ष २० - अंक ७९, जुलाई - सितम्बर २०२३

नए मानव की तलाश में

पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि

भावों का एक बवंडर उठता है
अंतरिक्ष की प्रयोगशाला बना
मुझे गगन में लटका देता है
भावों का दूसरा बवंडर उठता है
धरती के गर्भ में दहकते
आग-बबूलों में मुझे झोंक देता है
भावों का एक तीसरा बवंडर उठता है
मुझे कुत्तों और गिद्धों से नुची
किसी दम तोड़ती
उर्वशी की बाँहों में फेंक देता है
भावों का एक और बवंडर उठता है
जो जर्जरित, व्याधिग्रस्त, खोखले समाज को
महाकाल की घंटियाँ बजा
चिता पर चढ़ाने को
मुझे मज़बूर कर देता है
और मैं
नए मानव की तलाश में
भटकने लगता हूँ.

वसुधा

संस्थापक, सम्पादक व प्रकाशक : डॉ. स्नेह ठाकुर

(वर्ल्ड बुक ऑफ़ रिकॉर्ड, लन्दन में नाम अंकित)

(भारत के राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति भवन में "हिन्दी सेवी सम्मान" से सम्मानित)

शीर्षक	रचयिता	पृष्ठ
सम्पादकीय		२
पुरुषोत्तम योग, अध्याय १५	अविनाश कुमार	३
कटु अनुभव	अमलदार नीहार	४
कलियुग की द्रौपदी	डॉ. लता अग्रवाल “तुलजा”	५
राम	बन्दना घोष	१०
गुरु पूर्णिमा	मदन लाल गुप्ता	११
मनाली के एकांश का सौन्दर्य	अनिता रश्मि	१३
प्रगति का अक्षय मंत्र	राजेन्द्र शर्मा	१९
भारत में उच्च शिक्षा का निजीकरण घातक	गौरीशंकर वैश्य “विनम्र”	२१
रघुनायक के प्रति	डॉ. ऋतु माथुर	२३
कहाँ रहें भगवान?	महेश शर्मा “धार”	२४
सौदा	राम नगीना मौर्य	२५
गीत ये न कहो!	बृज राज किशोर “राहगीर”	३०
पाश्चात्य राष्ट्रवाद से भिन्न है भारतीय राष्ट्रवाद	विजय रंजन	३२
नये मानव की तलाश में	पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह “शशि”	१ अ
डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार		४४ अ

रचनाओं में निहित विचार तथा मन्तव्य रचनाकारों के निजी विचार तथा मन्तव्य हैं। 'वसुधा' रचनाकारों के विचारों के लिए उत्तरदायी नहीं है। प्रकाशक की आज्ञा बिना कोई रचना किसी प्रकार उद्धृत नहीं की जानी चाहिए। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा।

रचनाएँ भेजने के लिए सम्पर्क पता :

16 Revlis Crescent, Toronto, Ontario M1V-1E9, Canada. TEL. 416-291-9534

वार्षिक शुल्क Annual subscription.....$25.00

डाक द्वारा By Mail $35.00, International Mail $40.00

Website: http://ca.geocities.com/sneh.thakore/Home.html

e-mail: sneh.thakore@rogers.com

सम्पादकीय

अमृत महोत्सव के पावन वर्ष में हिन्दी की उपयोगिता पर मैं अपने विचार अपने प्रिय पाठकों से साझा करना चाहती हूँ। नि:संदेह मुझे **हिन्दी से प्यार है पर साथ ही मेरे हृदय में अन्य भाषाओं के प्रति अटूट सम्मान है।** मैं राष्ट्र-भाषा के रूप में हिन्दी का समर्थन करती हूँ, यद्यपि कि भारत की अन्य भाषाओं का भी आदर करती हूँ और चाहती हूँ कि वे अपनी शब्दावली से हिन्दी को समृद्ध करें।

हर प्रांतीय, सभी क्षेत्रीय भाषा स्वयं में महत्वपूर्ण हैं तथापि वे सम्पूर्ण अर्थों में क्षेत्रीय ही हैं। हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है जो कमोवेश या अधिकाधिक कुछ प्रयत्नों द्वारा सम्पूर्ण भारत में बोली और समझी जा सकती है। अत: क्षेत्रीय भाषाओं को अपना अस्तित्व बनाये रखते हुए अपनी शब्दावली से हिन्दी को समृद्ध करना है और उसी धरातल पर हिन्दी को भी बड़ी बहन की भाँति स्नेहपूर्वक व साथ ही धन्यवादी हो क्षेत्रीय शब्दावलियों को स्वयं में समाहित करना होगा।

क्षेत्रीय भाषाओं को पवित्र नदियों की तरह अपनी धरती को, शस्य-श्यामला प्रकृति को सींचते हुए, अपने साहित्य को समृद्ध करते हुए, अपनी संस्कृति को न केवल बनाए रखते हुए, वरन् उसे उच्चतम शिखर तक पहुँचाने में प्रयत्नरत रहते हुए, हिन्दी महासागर में मिल हिन्दी को भी समृद्ध करना है। क्षेत्रीय और हिन्दी भाषा में परस्पर प्यार की अनुभूति होनी चाहिये, ईर्ष्या व कलह की नहीं। वे एक-दूसरे की परस्पर पूरक हैं, प्रतिद्वंद्वी नही। भारत की अनेकता में एकता है। और यही तथ्य भारत को श्रेष्ठ बनाता है। हिन्दी में सामर्थ्य है कि वह स्नेहपूर्वक सभी क्षेत्रीय भाषाओं के शब्दों को न केवल बिना किसी भेद-भाव के वरन् प्रेमपूर्वक आवश्यकतानुसार स्वयं में समाहित कर, उनसे समृद्ध हो, भारत की राष्ट्र-भाषा के पद पर पदासीन हो।

हिन्दी ने ही अँग्रेजों की दासता से बाहर निकलने के लिये, भारतीयों को एकजुट होकर लड़ने के लिये प्लेटफॉर्म प्रदान किया था। स्वतंत्रता मिलते ही हिन्दी की उपयोगिता को समझ उसे राष्ट्र-भाषा का पद प्रदान कर देना चाहिये था। गर तब नहीं हुआ तो अब तो कर ही दें। प्रवास में यद्यपि कि हम, यह पूछने पर कि हमारी राष्ट्रभाषा क्या है? हम उनका सीधा उत्तर न दे, घुमा-फिर कर बड़े गौरव से कह देते हैं कि अरे हमारी तो २६ राज्य भाषाएँ हैं। फिर प्रश्न आता है कि यह तो ठीक है, पर राष्ट्र-भाषा क्या है?

प्रश्न केवल इतना ही नहीं है कि हम दूसरों को क्या कहें, तथापि देश की एकता के लिये, देश के हर नागरिक को देश के हर भाग से सम्पर्क बनाए रखने के लिए एक सार्वभौमिक भाषा की आवश्यकता है जो अभी तक के निष्कर्षों से हिन्दी ही दिखाई दे रही है। हिन्दी ही वह महानदी है जिसमें अन्य भाषाएँ हिन्दी को समृद्ध करते हुए ही स्वयं का विकास कर सकेंगी। यदि हिन्दी गई तो उसके साथ-साथ अँग्रेजी का दानव अन्य प्रांतीय भाषाओं को भी निगल जाएगा। अँग्रेजी, एक भाषा के रूप में जानना अच्छी बात है, पर उसे सर्वाधिक अपनी भाषा बनाना, अपनी सभ्यता और संस्कृति से हाथ धोना है, जो किसी भी देश के लिए हितकारी नहीं है। अत: भारत और भारतीयता के लिए, उसके संस्कार, उसकी संस्कृति के लिए हिन्दी को सर्वोपरि मानना आवश्यक है। यही कारण है कि मैं हिन्दी की पक्षधर हूँ, हिन्दी की समर्थक हूँ।

हिन्दी की प्रभुता को स्वीकारने का एक और महती कारण है, वैज्ञानिक वर्ग में इसकी उपादेयता। संसार के वैज्ञानिकों ने इस तथ्य को स्वीकारा है कि हिन्दी कम्प्यूटर की भाषा के रूप में सर्वोपरि है।

भारत के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेंद्र मोदी जी को हार्दिक धन्यवाद देना चाहूँगी कि उन्होंने विदेशों में भारत की जो प्रशंसनीय छवि बनाई है, एवं हिन्दी में अपने भाषण देकर भारतीयता का, भारतीय संस्कृति का जो मान बढ़ाया है, वह अतुलनीय है, प्रशंसनीय है।

जय भारत, जय भारती, वन्दे मातरम् ।

सस्नेह, स्नेह ठाकुर

अध्याय १५ – पुरुषोत्तम योग

अविनाश कुमार

इस अध्याय में हरि परब्रह्म पुरुषोत्तम का ज्ञान देते हैं, क्षर-अक्षर-अक्षरतीत का वर्णन करते हैं और माया रूपी संसार वृक्ष की व्याख्या करते हैं। प्रभु के अनुसार माया रूपी यह वृक्ष केवल आसक्ति हीन होकर ही काटा जा सकता है।

वृक्ष जगत का रूप दिखे जो, वैसा न मन भाए,
अंत, न आदि, असंग के द्वारा, वृक्ष ये काटा जाए।

जिस प्रकार वायु सुगंध को, अपनाए औ तज जाए,
तिस प्रकार, यह जीव काया के, बंधन बदले जाए।

मैं धरा में शक्ति बनकर, पहले अन्न उपजाऊँ,
मैं ही देह मे अग्नि बनकर, वही अन्न पचाऊँ।

मैं हूँ सबके मन मे स्थित, ज्ञान, मोह भंडार,
ज्ञाता, ज्ञानी, ज्ञानेय हूँ मैं, मैं ही दोष संहार।

क्षर – अक्षर के बीच है पलता, यह सारा संसार,
जीव क्षरत है, जीवात्मा - अक्षर अपरम्पार।

कटु अनुभव

अमलदार नीहार

कटु अनुभव होता है
किरायेदारी की इस यात्रा में।
स्मृतियों की कुछ मिठास
लिपटी हुई संग-साथ चलती है
कुछ दंश चुभे काँटे की तरह टीसते है
तिरस्कार, अपमान और उपेक्षा के भी
कोई बहुत अपनापन
हाथ छुड़ा लेता है अचानक
जब उसकी बहुत जरूरत महसूस होती है
किरायेदार ही तो हैं इस दुनिया के
किसी के दिल में रहने लगते हैं
किरायेदार की तरह
इस देह-गेह में भी हैं हम
एक किरायेदार ही
न जाने कौन कब
हमें बाहर फेंक दे सामान की तरह।

कलियुग की द्रौपदी

डॉ. लता अग्रवाल 'तुलजा'

एम.बी.बी.एस. की इंटर्नशिप कर रही थी, माँ पापा की इकलौती बेटी मैं, चूँकि पापा कमिश्नर पद पर थे इसीलिए सुख-सुविधाओं की कोई कमी नहीं थी. बड़ा-सा बँगला हमें मिला था, गाड़ी नौकर-चाकर सभी कुछ तो था और बँगले में रहने वाले महज हम तीन लोग. माँ, पापा और मैं, कोई भाई-बहन नहीं इसलिए हमसे अधिक तो घर में नौकर-चाकरों से रौनक रहती थी. माँ की विवशता ही कहूँ कि वे अपना मन लगाने के लिए नौकरों से बतियाती रहतीं. इसी बँगले के पिछले हिस्से (आउट हाउस) में टू.बी.एच. का एक क्वार्टर था. पिछले सप्ताह ही उसमें दो नए कार्यकर्ता रहने आए. माँ से पता चला था दोनों सगे भाई हैं, एक पापा के ऑफिस में उनका निजी भृत्य और दूसरा पापा की गाड़ी का ड्राइवर था. दोनों ही बहुत मिलनसार लगे मम्मी को, आते-जाते मम्मी से पूछ जो लेते, "मैडम जी! कोई काम हो तो मुझसे कह दिया करें." माँ मेरी ममता की मारी, उनके भीतर ममता का इतना सैलाब हिलोरे लेता कि उनकी ममता मुझ अकेली पर लुटाने के बाद भी शेष बची रह जाती थी. इसलिए घर में जब भी मीट पकता माँ रसोइए से कहकर उन दोनों भाइयों को जरूर पहुँचातीं. अर्धेन्दु और अतिन दोनों ही किसी छोटे-से गाँव से रोजी-रोटी की तलाश में यहाँ आए लगते थे, सो मम्मी की पीड़ा यह थी कि, "बेचारे घर से दूर रहते हैं मन करता होगा न घर का बना खाने को."

मैं मजाक में कहती, "बहुत प्यार आ रहा है मम्मी उन पर तो गोद ले लीजिए एक छोड़ दो-दो बेटे मिल जाएँगे, वह भी रेडीमेड."

"इतना शौक नहीं मुझे बेटों का, मेरी बेटी क्या कम है बेटों से....मगर तुम नहीं समझोगी बेटी, माँ की आत्मा ...ममता अपना-पराया नहीं देखती. जब भी उन दोनों बच्चों को देखती हूँ लगता है ...."

"आपका भी कोई बेटा होता तो इतना ही बड़ा होता यही ना." मैंने माँ की बात को बीच में ही काटते हुए कहा.

"मुझे ऐसा कुछ नहीं लगता रानू मेरे लिए बेटी हो या बेटा एक बराबर है. हमने बेटी की परवरिश किसी बेटे से कम नहीं की है. अब तुम डॉक्टर बन जाओगी अपने पैरों पर खड़ी हो जाओगी...."

माँ आगे और भावुक ना हो जाएँ, इसलिए मैंने माँ का ध्यान बँटाने के लिए अपना एक प्रश्न छोड़ दिया, "अच्छा माँ! ये अर्धेन्दु और अतिन कुछ अटपटे-से नाम नहीं लग रहे?" तब माँ ने बताया वे बंगाली हैं, कोलकाता के पास के किसी छोटे से गाँव के रहने वाले हैं."

"अच्छा तो आपने उनसे उनका पूरा बायोडाटा भी ले लिया."

"इसमें बायोडाटा की क्या बात है, बात-बात में पता चल गया. गरीब परिवार से हैं दोनों, बेचारे अपने आपको किस्मत वाले मानकर खुश हैं कि उन्हें सरकारी विभाग में छोटी ही सही, नौकरी तो मिल गई. वह भी एक साथ दोनों भाइयों को... कुछ गरीबी तो दूर होगी घर की." माँ ने कहा.

"हाँ, गरीबी दूर होगी...जानते नहीं अभी शहर के खर्चे... बचा पाएँगे इतना कि घर भेज सकें." खैर! मुझे क्या मैं तो यूँ ही बस माँ का ध्यान बँटाने, उन्हें छोड़ती रहती हूँ. समय अपनी गति से चल रहा था, अर्धेन्दु और अतिन को आये लगभग पाँच माह होने को आये.

एक दिन शाम को माँ ने बताया दोनों भाई गाँव गये हैं, कह रहे थे, "मैडम जी! हमने कुछ रोज की छुट्टी ली है, गाँव जा रहे हैं."

"दोनों एक साथ, क्या कोई खास बात." माँ ने उनसे पूछा, तो कहने लगे, "मैडम जी! हमारी बहन की शादी तय हुई है."

"अच्छा बधाई हो, कितनी बहन है तुम्हारी?"

"एक ही है, बहुत दिनों से वर खोज रहे थे मगर लेन-देन को लेकर कुछ जम नहीं पा रहा था."

"चलो ईश्वर की कृपा हुई आगे भी सब ठीक होगा." कहते हुए माँ ने अपनी ओर से कन्यादान की छोटी-सी भेंट के रूप में एक साड़ी और उसके साथ सिंगार का सामान उन्हें देते हुए कहा मेरी ओर से अपनी बहन को बहुत सारा प्यार देना."

बदले में वे बोले, "कुछ चाहिए मेडम जी कोलकाता से तो बताइए, लेते आयेंगे...वैसे वहाँ का सिंदूर बहुत प्रसिद्ध है."

"नहीं...नहीं, मैं कहाँ लगाती हूँ, रिएक्शन कर जाता है मुझे सिंदूर."

अर्धेन्दु और अतिन को गए एक सप्ताह हो गया था रविवार का दिन था सुबह का नाश्ता कर मैं और रामू काका मिलकर एटम को नहला रहे थे. उसे नहलाना यानि किसी पहलवान से कुश्ती लड़ना है. मुझ अकेले से तो जर्मन शेफर्ड सम्हलने से रहा. तभी गेट पर ऑटो रुकने की आवाज से हमारा ध्यान गेट की ओर गया. अर्धेन्दु और अतिन ऑटो से उतर रहे थे ... यह क्या उनके साथ घूँघट डाले एक स्त्री भी है!

"कौन है रामू काका ये?" मैंने रामू काका की ओर देखते हुए आश्चर्य व्यक्त किया.

"पता नहीं बिटिया, भीतर आ जावे तो पता चले." दोनों के आने से मम्मी के चेहरे पर उमड़ता मातृत्व देखा जा सकता था. मम्मी को सामने देख दोनों भाइयों ने मम्मी के पैर छुए तो वह स्त्री भी उनका अनुसरण करते हुए मम्मी के पैरों में झुक गई. मम्मी ने प्यार से उसके माथे पर हाथ फेरते हुए प्रश्नवाचक दृष्टि से दोनों भाइयों की ओर देखा, तो अर्धेन्दु ने जैसे संकोच से अपनी आँखें झुका ली तो अतिन बोला, "मैडम जी! यह अजय की पत्नी है, हमारी भौजी, चैताली." एक पल को माँ के चेहरे पर वह भाव था जो मेरे चेहरे पर आया था, कि ये तो कह कर गए थे बहन का ब्याह है, किंतु माँ थी ना अपने भावों को छुपाना उससे बेहतर भला कौन जानता है.

"अरे वाह बहू है तो मुँह दिखाई भी होगी और हाँ! आज तुम तीनों का खाना यही बनेगा. यूँ भी आठ-दस दिन से घर बंद है, बहू को सफाई भी करनी होगी."

उनकी जिन्दगी सामान्य रूप से चलने लगी, मेरी अपनी व्यस्तताएँ थीं, इंटर्नशिप के रहते हॉस्पिटल में समय अधिक देना होता था, माँ को समय भी नहीं दे पाती थी. इसलिए भी माँ को अधिक खुशी हुई कि उनके पास भी कोई मन की बात साझा करने दिन भर होगी, मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ, माँ को निराश होना पड़ा; कारण चैताली को हिंदी नहीं आती थी.

जिज्ञासावश मैंने भी चैताली को देखना चाहा किन्तु यहाँ भी मुझे निराशा हाथ लगी. दरअसल चैताली में ऐसा कुछ नहीं था जिसे देखकर अंदाजा लगाया जा सके कि अर्धेन्दु ने उसे पसंद किया, माना वह बहुत खूबसूरत नहीं था मगर अच्छी कद-काठी का आकर्षक युवक था. वहीं चैताली कुछ अधिक श्यामल रंगत की अति साधारण नैन नक्श वाली थी, आकर्षण के नाम पर बस उसके कमर ताल लहराते काले, घने बाल ही मुझे भाए. माँ कहती हैं जोड़ियाँ ऊपर से बनकर आती हैं तो क्या किया जा सकता है. चैताली कभी अकेली हमारे घर नहीं आई जब कभी आती अर्धेन्दु के साथ ही आती. आते ही माँ के पैर छूती. माँ के अनुसार उसमें एक संस्कारी बहु के सारे लक्षण हैं. किन्तु जहाँ सम्वाद की बात आती तो माँ भी क्या कहतीं जब उसे हिंदी आती ही नहीं, माँ तो बंगाली सीखने से रही. चैताली का हमारे घर ना आना कभी संदेहास्पद नहीं लगा, कारण वह हिंदीभाषी नहीं थी, शायद संकोच में नहीं आती होगी. क्या कहूँगी, क्या समझूँगी.

शादी के बाद पहली बार चैताली का भाई और बहन उसे विदा कराने आए जो उससे उम्र में छोटे थे. उनके आने-जाने का रास्ता हमारे गेट से ही था इसलिए नजर पड़ जाती थी. मैंने देखा कि वे तो देखने में ठीक-ठाक हैं, बहन भी कॉलेज में पढ़ रही थी, हिंदी भी बंगाली अंदाज में सही अच्छी बोल लेती है. माँ से बहुत घुल-मिल गई थी तब माँ ने यूँ ही उससे पूछ लिया कि, "मिष्ठी! तुम तो इतनी घुल-मिल गई हो, चैताली हिंदी क्यों नहीं बोलती?"

"आंटी वो क्या है कि दीदी को पढ़ने में रूचि कम थी उसे घर के कामकाज अच्छे लगते थे तो वह घर में ही रही. वहाँ सब बंगाली में बात करते हैं न, इसलिए दीदी हिंदी नहीं सीख पाई."

"अच्छा, अर्धेन्दु ने तो हमें सरप्राइज कर दिया चैताली को संग लाकर. बहन के ब्याह की कहकर गया था और ले आया बहू." शायद माँ के मन की दबी जिज्ञासा थी. आज मिष्ठी ने उस पर से पर्दा हटा दिया.

"आंटी! शादी तो जीजू के बहन की ही थी किन्तु ऐन वक्त पर लड़के वाले दहेज के लिए अड़ गए. पैसे की व्यवस्था कैसे हो ...? हमारे पिता सम्पन्न थे किंतु दीदी के लिए वह लम्बे समय से वर की तलाश में थे जो मिल नहीं रहा था. पिताजी ने पैसे देने के साथ चैताली दीदी से शादी की शर्त रखी...इस तरह अचानक दीदी की शादी हुई. किंतु वह घर के कामकाज में बहुत होशियार है." मिष्ठी ने माँ के भाव को पहचान लिया था शायद.

'बिल्ली के भाग से छींका टूटा', ... तो पैसे के कारण...अपनी बहन का घर बसाने अर्धेन्दु ने यह समझौता किया. मन में अर्धेन्दु के प्रति मान और बढ़ गया. सब कुछ ठीक-ठाक चलता रहा, फिर कभी-कभी ऐसा आभास होने लगा कि चैताली का स्वर जो अभी तक सुनाई नहीं देता था अब कभी-कभी उसका ऊँचा स्वर सुनाई देता है...उसके संस्कार देखकर आवाज के सुर मेल नहीं खाते थे. क्या कहती वह तो समझ नहीं आता किन्तु माँ की अनुभवी आँखें कुछ समझने का प्रयास कर रही थीं.

इसी बीच एक बार चैताली की माँ भी आई, उस दिन भी जोर-जोर से आवाज आई, कुछ तो पक रहा है उस घर में रिश्तों के बीच, तभी से मन में कुछ खटकने-सा लगा था. चैताली की माँ भी आई और चली गई. लेकिन इन दिनों मैंने देखा कि अक्सर जब भी मैं कॉलेज जाने के लिए निकलती चैताली मानों मौके की तलाश में रहती... मेरा कार का गेट खोलना होता कि वह झट आकर एक लिफाफा मेरे आगे करते हुए बस इतना कहती "पोस्ट".

मैं समझ जाती कि डाक डालनी है और मैं उसके लेटर पोस्ट कर देती. एक दो बार मन में आया भी कि कहूँ अर्धेन्दु या अतिन को क्यों नहीं देती, लेकिन एक तो भाषा के कारण संवादहीनता हमारे बीच सदैव रही, दूसरे जो आवाजों की टकराहटें इन दिनों उस घर में हो रही थी उससे मुझे लगा कि कुछ निजी है, इसलिए चैताली ये लिफापा मुझे दे जाती है. उस पर अँग्रेजी का एड्रेस देख कर भी मुझे हैरानी हुई. फिर हम लोग चाहे कितनी भी ऊँची डिग्रियाँ क्यों ना ले लें, इंसान के मनोभावों को पढ़ने में अक्सर चूक जाते हैं. डॉक्टर होकर भी मैं कहाँ समझ पाई चैताली के मन की व्यथा को. किंतु मेरा अंतर्मन अवश्य कह रहा था कि कुछ तो बात है, अपने शुरू के दिनों में उसके चेहरे पर जो मुस्कान दिखाई देती थी वह अब नजर नहीं आती.

इसी बीच अब अर्धेन्दु और अतिन से लगभग कुछ ही अधिक उम्र का एक व्यक्ति का बार-बार उनके घर आना हुआ. एक बार माँ ने चौकीदार से पूछा भी कि कौन है वह? तो उसने बताया कि रिश्ते में उनका काका है, जो रोजगार के लिए संघर्ष कर रहा है. आज कॉलेज जाते हुए चैताली फिर मेरे पास आई, "दीदी!" कहते हुए उसने लिफाफा आगे बढ़ा दिया. मैंने भी 'ओ.के.' कहते हुए लिफाफा लेकर हमेशा की तरह पास वाली सीट पर रख दिया. संयोग से डिस्पेंसरी में पेशेंट की भीड़ होने से घर लौटने में देरी हो गई और डाक भी कार में ही रखी रह गई. ठंड के दिन थे, साँझ जल्दी ही ढलने लगी थी, चारों ओर कोहरा होने से सभी लोग अपने दरवाजे, खिड़की बंद कर घर में कैद हो गए थे. उस दिन हम भी टी.वी. के सामने बैठे सीरियल देख रहे थे. तभी दरवाजे पर हाथ

से दस्तक सुनाई दी. दस्तक का स्वर ऊँचा, कुछ अलग-सा था. समझ नहीं आया गेट पर चौकीदार रहता है और आगंतुक बेल बजाता है, यह दस्तक कैसी?

पिताजी ने जोर से पूछा, "कौन है ?"

बाहर से आवाज आई, "साहब मैं अर्धेन्दु". उसका स्वर घबराया हुआ था.

"क्या बात है ...और चौकीदार कहाँ है ?" पापा ने अंदर से ही पूछा.

"साहब हम यहीं हैं, (चौकीदार का स्वर था) साहब जल्दी दरवाजा खोलिए ..." अर्धेन्दु ऊँचे स्वर में बोल रहा था. पापा ने दरवाजा खोला तो सामने चौकीदार भी खड़ा था और घबराया हुआ अर्धेन्दु भी, "साहब वह उधर, साहब वह उ..ध...र वह हकला रहा था."

पिताजी ने उसके कंधों को पकड़कर पूछा, "शांति से बताओ क्या हुआ है."

"वो चैताली ने अपने को जला लिया...."

"क्या...!" (हम सब हैरान हो गए)

चैताली ने आग लगा ली, प्लीज चलिए." चौकीदार और पिताजी दोनों उसके घर की ओर चल दिए. पीछे-पीछे मैं भी हो ली शायद उपचार की आवश्यकता पड़े. देखा तो चेताली ६० से ७०% जल चुकी थी. उसकी नायलॉन की साड़ी उसके बदन से चिपक गई थी, उसकी भवें और सर के बाल पूरी तरह जल चुके थे. पहचानी नहीं जा रही थी, दर्द के मारे जोर-जोर से चीख रही थी वह. उसका विकृत चेहरा देखा नहीं जा रहा था. पिताजी ने पूछा, "यह सब कैसे हुआ ?"

"वो साहब इसके मायके वाले इसे लेने नहीं आ रहे थे इसीलिए दुखी होकर इसने आग लगा ली."

"ऐसे कैसे हो सकता है! इतनी-सी बात पर कोई कैसे खुद को इतनी तकलीफ में डाल सकता है." मेरे मन में यह संदेह घर कर रहा था किंतु इस समय चैताली की जो हालत थी उसे फौरन डॉक्टर की जरूरत थी अतः एम्बुलेंस बुलवाकर उसे जल्द से जल्द अस्पताल भेजा गया। अस्पताल का बर्न वार्ड उसकी चीख से गूँज रहा था. उसका इलाज भी शुरू हो गया किंतु वह इतनी अधिक जल चुकी थी कि उसका बचा रहना नामुमकिन था. उसका दर्द मानो मेरी आँखों में बस गया था और चीखें कानों को बार-बार कुरेद रही थीं. साथ ही एक सवाल कि...मायके से कोई लेने ना आया महज इस बात को लेकर...? जाहिर है हमारे घर में भी उदासी छा गई. आँखों के सामने नई ब्याहता होकर आई, घूँघट में सिमटी चैताली घूम रही थी. माँ तो और भी उदास थीं, शायद उन्हें मन-ही-मन लग रहा था, काश! चैताली हिंदी जान पाती तो उन्हें अपनी पीड़ा बता देती और एक माँ होने के नाते शायद वे उसकी कोई समस्या सुलझा सकतीं.

किंतु होनी को कौन टाल सकता है, दो दिन के जीवन संघर्ष के बाद आखिर चेताली ने इस जीवन को अलविदा कह दिया, इस बीच उसके माता-पिता भाई-बहन सभी आ चुके थे। एक सुहागन के रूप में चैताली का अंतिम संस्कार किया गया. किंतु क्या कुछ पक रहा था इन रिश्तों के बीच कि महज सात माह में जिसकी परिणति इस रूप में दिखाई दी. चैताली के माता-पिता ने पुलिस में रिपोर्ट लिखायी कि उनकी बेटी को मरने के लिए बाध्य किया गया और आरोपी पति, देवर और रिश्ते का चाचा है. बात हमें बड़ी अजीब लगी. घर में एक ही चर्चा का विषय रहा चैताली...चैताली, अचानक मुझे ध्यान आया, उस रोज चेताली ने मुझे पत्र दिया था... मैं दौड़ कर कार से वह पत्र उठा लाई, उस दिन हॉस्पिटल में लेट होने के कारण मैं वह पत्र नहीं डाल पाई थी और फिर यह सब...ध्यान ही नहीं रहा. मैंने पिताजी को बताया चैताली ने मुझे आखिरी दिन यह पत्र दिया था. अब समस्या यह थी कि उस पत्र में आखिर है क्या? इससे पहले भी चेताली मुझे पत्र दे चुकी थी. अगर उनके बीच रिश्ते ठीक नहीं है तो अर्धेन्दु और अतिन को इस पत्र के बारे में बताना उचित होगा?...मुझ पर भी संदेह करेंगे कि आखिर मैंने उसके पत्र क्यों लिए ? फिर भी यह पत्र काफी कुछ कह सकता है.

पापा ने कहा यह पत्र हमें पुलिस के हवाले कर देना चाहिए किंतु मैं समझ नहीं पा रही थी कि चैताली ने बहुत विश्वास के साथ मुझे यह पत्र अपने मायके वालों तक पहुँचाने के लिए दिया था फिर मैं इसे पुलिस के हवाले कैसे कर दूँ, इसी उलझन में थी, दूसरे दिन जब अस्पताल पहुँची तो मेरे एक मित्र ने कहा कि कोई लड़की है तुमसे मिलना चाहती है, तुम्हारा इंतजार कर रही है मैंने देखा वह मिष्ठी थी.

"मिष्ठी तुम!"

"हाँ दीदी, मैं आपसे जानना चाहती हूँ क्या आप कुछ बता सकती हैं कि उस दिन दीदी के साथ क्या कुछ घटित हुआ था?" जाहिर है वह बहुत उदास थी.

"नहीं मिष्ठी...जानती तो अवश्य बताती, मैं, इन्फेक्ट मम्मी–पापा सब हैरान हैं आखिर चैताली ने ऐसा क्यों किया? किंतु हाँ उस दिन कॉलेज जाते हुए मुझे चैताली ने एक पत्र जरूर दिया था पोस्ट करने के लिए. इससे पहले भी तीन-चार बार जो पत्र दिए वह मैंने ही डाक में डाले थे. मगर उसमें तो अँग्रेजी में एड्रेस लिखा होता था...तो क्या चैताली को अँग्रेजी आती थी?"

"नहीं हमने ही एड्रेस लगे लिफाफे उन्हें दे रखे थे. क्या वह खत होगा आपके पास?"

"हाँ है, आओ मेरे कमरे में बैठते हैं." कहते हुए मैं उसे अपने केबिन में ले गई और ख़त उसे देते हुए कहा,

"मिष्ठी यदि मुझ पर थोड़ा भी विश्वास है तो इस पत्र में क्या लिखा है मुझे बता सकती हो?" मिष्ठी ने मेरे सामने खत खोला और पढ़ने लगी, उसने जो बताया उसके अनुसार -

"मां ! बाबा !

आपने जल्दबाजी में मेरी शादी अर्धेन्दु के साथ करा मुझसे अपना पिंड छुड़ा लिया किंतु मेरी परेशानी को नहीं समझ पाए. बार-बार मैंने अपनी परेशानी माँ को बताने की कोशिश की, लेकिन माँ ने मुझे हमेशा चुप करा दिया. बाबा यहाँ मैं तो बड़ी उम्मीद से आई थी कि अपने पति के साथ मिलकर अपना घर सजाऊँगी, मगर यहाँ तो मैं खानदान की कुलवधु न होकर कलियुग की द्रौपदी बन कर रह गई बाबा. अर्धेन्दु, अतिन और उनके दूर के रिश्ते का वह चाचा यह तीनों ही ....आगे और क्या कहूँ कहते हुए लाज आती है. अब मैं माँ बनने वाली हूँ, किसके बच्चे की... मैं खुद नहीं जानती. अफसोस ! तीनों में से कोई भी इस बच्चे को अपनाने को तैयार नहीं है. वे चाहते हैं मैं इसे मार डालूँ किंतु मैं इस बच्चे को मारना नहीं चाहती...आखिर इसका क्या दोष? इसलिए मेरे पास एक ही रास्ता बचा है कि मैं खुद को समाप्त कर लूँ. मुझे माफ करना बाबा! यह पत्र आप तक पहुँचने तक शायद मैं ना रहूँ.

आपकी चैताली."

खत की बातें सुनकर मैं तो जैसे बर्फ-सी हो गई, क्या कुछ घट रहा था चैताली के जीवन में. वह अबोध भीतर-ही-भीतर जाने कितने रिसावों से गुजर रही थी. किसे कहती अपना दर्द...ज्यादा पढ़ी-लिखी भी नहीं थी कि स्वयं से कोई कदम उठा पाती. उसने लिखा 'आपने तो पिंड छुड़ा लिया बाबा'...सवाल मुझे जकड़ रहा था, क्या बेटियाँ पिंड छुड़ाने के लिए होती हैं? और एक बात मुझे आहत कर गई उसने माँ से अपनी बातें साझा कीं, माँ आई थी किंतु जब वह जान गई थी तो क्यों ना उसे अपने साथ ले गई...? मेरी नजर में अपनी माँ का कद और ऊँचा हो गया. वे तो ममता मुफ्त में बाँटती रहती हैं...अभागन चैताली के हिस्से माँ की ममता क्यों नहीं आ पाई...? अन्यथा वह आज इस तरह....उसने अपने घर वालों से मदद की गुहार लगाई थी लेकिन कोई क्यों उसके साथ खड़ा नहीं था? क्या वाकई बेटियाँ खूँटी पर टँगी कपड़े की तरह होती है कि एक खूँटी से उतार दूसरी खूँटी पर टाँग देने भर से पहली खूँटी की जिम्मेदारी और वजन दोनों खत्म हो जाते हैं?

माना चैताली का मन पढ़ाई में कम लगता था किंतु उसे समझा-बुझाकर पढ़ाया जा सकता था, शिक्षा का महत्व बताया जा सकता था. अगर वह थोड़ा पढ़ लेती तो आज अपने हित में कुछ निर्णय कर पाती. समझ पाती

कि जिंदगी इतनी सस्ती नहीं है कि किसी के जुर्म की सजा स्वयं को दें. वे माता-पिता जो धन के बल पर बेटियों का सौदा करने को तैयार हो जाते हैं, किन्तु वही धन उसे आत्मनिर्भर बनाने में नहीं लगा सकते ....अपराधी हैं वो बेटियों की नजर में. काश! चैताली को अपनी माँ का ही सहारा मिल जाता तो उसके जीवन का काफी कुछ कुहासा छट सकता था... अर्धेन्दु और अतिन गाँव से आये थे अपने घर की गरीबी दूर करने किन्तु देह तक सिमट कर रह गये...अब न घर के रहे न अपने जीवन के.

मिष्ठी से पता चला कि उन्होंने केस कर दिया है...अब पुलिस केस में लाखों रुपए खर्च कर देंगे. काश! चैताली के जीते जी यह कार्यवाही की होती तो चेताली और उसके गर्भ से दुनिया देखने को आतुर वह नन्हा दिल आज धड़क रहा होता...और चैताली...कलियुग की द्रौपदी बन दुर्योधन, दु:शासन और जयद्रथ को दंड देने के स्थान पर स्वयं को दंड देने पर बाध्य नहीं होती. सोच रही हूँ कितना अच्छा होता यदि हमने द्रौपदी को अपना आदर्श बनाया होता तो आज हमारे देश की बेटियाँ सीता की तरह छलने के बजाय दुष्कर्मियों से अपने अपमान का डटकर प्रतिशोध लेतीं.

राम

बन्दना घोष

राम ही शक्ति, राम ही भक्ति, राम में जगत समाया,
राम-नाम तू जप ले पगले, मानुष जनम जो पाया।

राम साँस है, राम आस है, वही है तारन हारा,
तू हनुमान-सी भक्ति करे तो, तेरे हृदय समाया।

राम सोच है, राम मोक्ष है, वही सनातन धारा,
दो अक्षर का शब्द राम है, जागृत तीर्थ समाना।

राम धर्म है, राम कर्म है, तत्व, सत्य सब रामा,
आदि राम है, अंत राम है, तारक मंत्र कहाया।

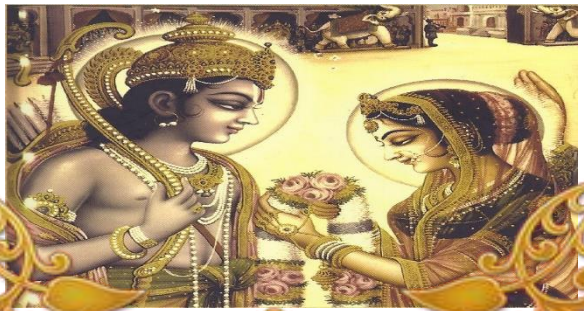

गुरु पूर्णिमा

मदन लाल गुप्ता

भारत में गुरु पूर्णिमा के मनाये जाने का इतिहास काफ़ी प्राचीन है। यह पर्व आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा के दिन मनाया जाता है (२०२३, गुरु पूर्णिमा ३ जुलाई, सोमवार)। शास्त्रों में गुरु को ईश्वर के समतुल्य बताया गया है। गुरु संस्कृत का शब्द है जो दो शब्दों के मेल से बना है जिस में "गु" का अर्थ "अंधकार" व "रु" का अर्थ "प्रकाश" से है अर्थात् अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने वाला। यहाँ अंधकार का अर्थ अज्ञानता से है जबकि प्रकाश का अर्थ ज्ञान से है।

पुराणों के अनुसार शिवजी महाराज ही सबसे पहले गुरु हैं। शिवजी ने ही पृथ्वी पर सबसे पहले धर्म और सभ्यता का प्रचार-प्रसार किया। यही कारण है कि उन्हें आदि गुरु भी कहा जाता है। शिवजी ने शनि और परशुराम जैसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों को शिक्षा प्रदान की है। इसके साथ ही वह योग, साधना के भी जनक थे, जिसके कारण उन्हें आदि योगी के नाम से भी जाना जाता है। योग की शिक्षा उन्होंने सात लोगों को दी थी, आगे चलकर यही सातों व्यक्ति सप्तर्षि के नाम से प्रसिद्ध हुए। यहीं कारण है कि शिवजी को गुरुओं का गुरु भी माना जाता है।

महर्षि वेदव्यास का जन्म आषाढ़ पूर्णिमा के दिन लगभग ३००० ई. पूर्व हुआ था और उनके द्वारा ही वेद, उपनिषद और पुराणों की रचना की गयी। इसलिए गुरु पूर्णिमा का यह दिन उनकी स्मृति में भी मनाया जाता है। हिंदू धर्म में इस पर्व को बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। वेदों और पुराणों में गुरु को ब्रह्मा, विष्णु और महेश सा पूज्य माना गया है। एक बच्चे को जन्म भले ही उसके माता-पिता देते हैं लेकिन उसे शिक्षा प्रदान करके समर्थ और शिक्षित उसके गुरु ही बनाते हैं। गुरु पूर्णिमा के दिन स्कूलों और कॉलेजों में बच्चे अपने गुरुजनो को उपहार प्रदान करके उनका आशीष प्राप्त करते हैं।

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पायँ। बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय। - गुरू और गोबिंद (भगवान) एक साथ खड़े हों तो पहले किसे प्रणाम करना चाहिए। ऐसी स्थिति में गुरू के श्रीचरणों में शीश झुकाना उत्तम है जिन कि कृपा रूपी प्रसाद से भगवान के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। गुरु के द्वारा ही अपने शिष्यों को सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक मूल्यों के बारे में बताया जाता था। समाज में रहने के लिए क्या आवश्यक है और क्या नहीं, समाज के नियम, क्या सही हैं व क्या गलत, क्या कर्म करने चाहियें क्या नहीं, हमारे अधिकार व उत्तरदायित्व क्या हैं इत्यादि सभी बातें एक शिष्य अपने गुरु से ही सीखता था।

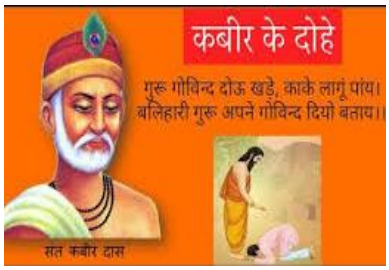

एक गुरु में मुख्य रूप से निम्नलिखित गुण होने आवश्यक हैं: उसे वेदों और शस्त्रों का सम्पूर्ण ज्ञान हो, योग व आयुर्वेद में निपुण हो, शस्त्र विद्या में भी पारंगत हो, ईर्ष्या, घृणा, लोभ, वासना जैसी भावनाएँ ना हों, आत्म-ज्ञान की प्राप्ति हो चुकी हो, सांसारिक वस्तुओं, धन का लोभ ना हो इत्यादि। प्राचीन काल में गुरु जंगल में रहते थे।

गुरु किसी की छुपी हुई विद्या/कौशल को पहचान सकता था, उस कौशल को उसकी शक्ति बना सकता था इत्यादि। उदाहरण के तौर पर गुरु द्रोणाचार्य ने अर्जुन की प्रतिभा को पहचाना व उसके जीवन को अलग दिशा दी जिससे वे सर्वश्रेष्ठ तीरंदाज़ बना। इसी प्रकार जब एकलव्य से गुरु द्रोणाचार्य ने प्रश्न किया कि तुम्हारा गुरु कौन है, तब उसने कहा - गुरुदेव आप ही मेरे गुरु हैं और आपकी ही कृपा से आपकी मूर्ति को गुरु मानकर मैंने धनुर्विद्या सीखी है। द्रोणाचार्य के गुरु दक्षिणा माँगने पर एकलव्य ने सहर्ष अपने दाहिने हाथ का अँगूठा काटकर गुरु के चरणों में रख दिया। गुरु का प्रेम दिखने में कठोर होता है, किंतु इससे शिष्य का ज़रा भी अहित नहीं होता।

गुरु पूर्णिमा का पर्व हिंदू धर्म के साथ ही बुद्ध तथा जैन धर्म के अनुयायियों द्वारा भी मनाया जाता है। बुद्ध धर्म के अनुसार इसी दिन भगवान बुद्ध ने वाराणसी के समीप सारनाथ में पाँच भिक्षुओं को अपना पहला उपदेश दिया था। जैन धर्म में गुरु पूर्णिमा को लेकर यह मत प्रचलित है कि इसी दिन जैन धर्म के २४वें तीर्थंकर महावीर स्वामी ने गांधार राज्य के गौतम स्वामी को अपना प्रथम शिष्य बनाया था। जिससे वह 'त्रिनोक गुहा' के नाम से प्रसिद्ध हुए, जिसका अर्थ होता है प्रथम गुरु। यही कारण है कि जैन धर्म में इस दिन को त्रिनोक गुहा पूर्णिमा के नाम से भी जाना जाता है।

प्राचीन समय की कथाओं को हम देखेंगे तो पाएँगे कि एक गुरु जब राजभवन में आते थे तब स्वयं राजा उनका स्वागत करते थे। एक राज्य के लिए राजगुरु सबसे श्रेष्ठ होता था, वह राज्य की राजनीति में सीधे हस्तक्षेप कर सकता था, राजा को परामर्श या चेतावनी भी दे सकता था।

गुरु के बिना ज्ञान नहीं, ज्ञान के बिना कोई महान नहीं.

भटक जाता है जब इनसान, तब गुरु ही देता है ज्ञान।

ईश्वर के बाद अगर कोई है, तो वो गुरु है, दुनिया से वाकिफ़ जो कराता वो गुरु है।

हमें अच्छा इंसान जो बनाता है वो गुरु है, हमारी कमियों को जो बताता वो गुरु है।

हमें इंसानियत जो सिखाता वो गुरु है, हमें हीरे की तरह तराश कर विश्वास जगा दे वो गुरु है।

बिना गुरु के जिंदगी आसान नहीं, जिस के पास नहीं है गुरु, समझ लेना कि वो इंसान नहीं।

मनाली के एकांश का सौंदर्य

अनिता रश्मि

भारत के अप्रतिम सौंदर्य से अभिभूत हैं हम भारतवासी। प्रायः कहीं न कहीं पर्यटन के लिए हमारा जाना होता रहता है।

कुछ साल पूर्व मैं, बैंकर्स पति ओम प्रकाश और बेटी शिमला गए। फिर मनाली। देवभूमि हिमाचल प्रदेश के मनाली में चार दिनी यात्रा के दौरान व्यास नदी के पुल को पारकर हम मालरोड भी घूमते रहे, बौद्ध मठ भी, हिडिम्बा मंदिर भी। विशालकाय नदी में रॉफ्टिंग आदि देखने का आनन्द भी अजूबा था।

मनाली का स्टेट बैंक हॉलिडे-होम बेहद खूबसूरत पर्वतीय चोटी पर बना है। यहाँ से बर्फ से ढँके पहाड़ों का खूबसूरत नजारा आँखों को सुकून देता है। ठीक उसकी ऊपरवाली चोटी पर शानदार बागीचे के साथ एक और इमारत। कमरे के पीछे की खिड़की से झाँकते ही वह इमारत दिखलाई पड़ती। साथ में ठीक नीचे सेब बगान भी। मैं अक्सर उसे देखती। छोटे-छोटे हरे सेब आ चुके थे। कच्चे सेबों को देख लगता रहा, काश! सेब के मौसम में आना होता तो बड़े लाल-लाल सेब नजरों को कितनी संतुष्टि देते। और मनाली में जहाँ भी गुलाब दिखे, उनके आकार ने भी ध्यान खींचा। इतने अधिक बड़े कि देखते मन नहीं भरता। गुलों को तोड़ने की आदत पड़ी नहीं थी, इजाजत भी नहीं थी। बस, घने, भरे-भरे सुर्ख लाल गुलाबों के साथ फोटो खिंचाकर ही संतोष करती रही। जब भी कहीं निकलना होता, वे राह में मिल रोकने की कोशिश अवश्य करते।

उधर हर कोण से इन गर्म दिनों में भी आधे पिघले, आधे जमे पहाड़ एक अलग तरह का नजारा पेश कर रहे थे। श्वेत-नीले या श्वेत-काले धारीदार पर्वत श्रृंखलाओं की जादूगरी इसी अधूरेपन के कारण थी।

<u>गोम्पा बौद्ध मठ</u> –

यह मठ बौद्ध धर्म का प्रमुख तीर्थ स्थल है। इस मठ का निर्माण १९६० में करवाया गया था। हर साल हजारों पर्यटक तिब्बत से भी यहाँ मठ का दर्शन करने आते हैं। तिब्बत पास होने के कारण मनाली के माल रोड से लेकर यहाँ तक तिब्बती सामग्री, तिब्बती चित्रादि के दर्शन हुए।

इस मठ का मुख्य आकर्षण मठ की छत है जो पीले रंग की पैगोडा स्टाइल में बनी हुई है और देखने में कलात्मक टॉवर जैसी लगती है। यहाँ घूमकर एक आत्मिक संतुष्टि, शांति का अनुभव हुआ।

हमारे बिहार के राजकुमार सिद्धार्थ के बुद्ध बन जाने और बुद्ध के पूरे विश्व में छा जाने का अहसास गहरा गया। खुद-ब-खुद बोध गया का बोधि वृक्ष, जिसकी छाँव तले सिद्धार्थ ने ज्ञान प्राप्त किया था, स्मरण हो आया। कुछ दिनों पूर्व ही तो गए थे। छोटी सी जगह से निकल बुद्ध ने एशिया के इन पर्वतीय स्थलों में कितने अनुयायी बना लिये। हिमालय के अनेक स्थलों पर बौद्ध स्तूपों, बौद्ध मठों और उनमें स्थित बौद्ध साहित्य, केसरिया रंग में ढले बेशुमार बच्चे, स्त्री, वृद्ध बौद्ध भिक्षुक इसके प्रमाण हैं। यहाँ भी हर तरफ केसरिया रंग की बहार थी। उनके घुटे सिर, दमकते भाल, केसरिया वर्ण की विशेष पोशाक और आत्मा में बुद्ध के सिद्धांत एक अलग वातावरण का निर्माण कर रहे थे।

बौद्ध चक्र को घुमाते हुए जैसे सबकी बुदबुदाहट में शामिल प्रार्थनाएँ कह रही थीं - " हर धर्म का एक ही उद्देश्य है...शांति...शांति...शांति और पर उपकार! "

हर बौद्ध मठों की तरह यहाँ भी शांति का साम्राज्य। पूर्व में किए गए सिक्किम के बौद्ध मठों के विहार की याद भी स्वाभाविक रूप से आ गई। आस-पास लगे घोटे-छोटे पताकाओं की भी। खुशी हुई कि पाटलिपुत्र (बिहार) के महान सम्राट अशोक के प्रयास पूरी तरह रंग ला चुके हैं। उन्होंने कलिंग युद्ध के बाद हिंसा का त्याग कर बौद्ध धर्म अपना लिया था। अपने पुत्र महेन्द्र, पुत्री संघमित्रा के माध्यम से बौद्ध धर्म के प्रचार में अपना तन-मन-धन लगा दिया था। सुदूर चोटियों तक बौद्ध स्तूपों के निर्माण इसके प्रमाण हैं।

'वे आज होते तो कैसा महसूस करते?' - इस प्रश्न का उत्तर हमारे पास नहीं था।

<u>हिडिम्बा मंदिर</u> –

एक दिन स्थानीय बागादि में भ्रमण के बाद हिडिम्बा मंदिर ले गया चालक। लकड़ी और पत्थरों से बना यह मंदिर महाभारत के पाडंवों में से एक भीम की पत्नी हिडिम्बा देवी को समर्पित है। १५५३ में इस पैगोडा शैली के मंदिर का निर्माण किया गया और यह मंदिर डूंगरी पार्क के बीच में स्थित है। लकड़ी के चार-स्तरीय शिवालय आकार की छत और नक्काशीदार प्रवेश द्वार बेहद आकर्षक।

बड़े से परिसर में घुसते ही चारों ओर से ऊँचे देवदारों से घिरे पार्क में आस-पास की दो-तीन महिलाओं ने घेर लिया। जिद सी मचाई और अपने साथ के खरगोशों को बेटी अनुभा के कँधे, सर पर डाल दिया। श्वेत कोमल खरगोश यूँ तो सबको खूब लुभाते हैं। लेकिन इस तरह?...यह उनके कमाने की जद्दोजहद थी। हमने कुछ पैसे दिए और आगे बीचों-बीच स्थित हिडिम्बा देवालय की ओर बढ़ गए।

देवदार हर तरफ अपनी ऊँचाई से मनुष्य के कद को नापते हुए...औकात दिखलाते हुए हमें देख रहा था। उसके तले खड़े होने, बैठने से अपने बौने होने का एहसास जैसे गहरा जाए। 'पर आत्मिक उन्नति ज्यादा मायने रखती है।' - सोचते ही संतोष के कबूतर आ बैठे मन में।

मंदिर जाने के लिए धूप में भी पर्यटकों की लाइन लकड़ी के प्रवेश द्वार से बाहर नीचे तक लगी थी। हिडिम्बा यहाँ दुर्गा की तरह पूजी जाती है। जैसे ही अंदर गई, सामने आधी चट्टान और उसी चट्टान के पास हिडिम्बा देवी की पूजा कर रहे थे सब। मेरे लिए कौतूहल का विषय, कैसे एक वनवासिनी राक्षसी इतनी पूजनीया बन गई? पता नहीं था, एक और आश्चर्य बाहर भी हमारा इंतजार कर रहा है।

मंदिर से निकल हम तीनों देर तक देवदार तले घूमते रहे। देवदार के सघन वृक्षों को देख, मैदान में पड़े लोहे के झूले पर अनुभा के साथ बैठ चुपचाप प्रकृति के अवदानों के प्रति नतमस्तक होती रही। आस-पास के सारे खुले-खिले इलाकों को देखती रही। प्रकृति से बड़ा आज तक न कोई चित्रकार हुआ है, न होगा। - मन में गहरे तक बैठी बात फिर याद आ गई।

बेहद खूबसूरत बड़े पार्क में पैदल पथ पर बढ़ते हुए हम पर्यटकों के कदमों का अनुसरण करने लगे। हमारा वाहन चालक आन्नद साथ था। उसने भीम और हिडिम्बा के पुत्र घटोत्कच की पूजा-अर्चना के बारे में बताया और एक वृक्ष के पास ले आया। पवित्र गाछ के रूप में इसकी पूजा की जाती है क्योंकि यहीं घटोत्कच की एक छोटी सी प्रतिमा रखी हुई थी। उस पर रोली की ललाई, अक्षत के आशीष एवं फूलों की चमक बिखरी हुई थी।

"साहब जी, यहाँ घटोतकच का एक बड़ा मंदिर बननेवाला है। जलदी बनेगा।"

"घटोत्कच की भी पूजा होती है? वह तो राक्... "

"...यहाँ तो सभी दोनों माँ-बेटे की पूजा करते हैं।" - चालक गाइड बन गया था।

"पूरा दुनिया में हिडिमबा और घटोतकच का कोई मंदिर नहीं है साहब जी।"

आगे वह हमें सामने ही स्थित संग्रहालय में ले गया। संग्रहालय में एक से एक मूर्तियाँ, आटा चक्की, स्थानीय पोशाकें, आभूषण, बर्त्तनादि थे। सब के सब प्राचीन काल को जीवित करते हुए। बर्तन, जो कभी उपयोग में लाए जाते थे। आभूषण, मुखौटे, नृत्य की पोशाकें, वाद्य यंत्र आदि अनेक वस्तुओं से परिचय हुआ।

(बाद में रोहतांग और यहीं कहीं तो स्थानीय वस्त्राभूषण धारण कर करीना कपूर ने जब वी मेट के 'हाँ! कोई तो बचा...' गीत पर नृत्य किया था। साथ के नर्तकों के चेहरों पर ऐसे ही मुखौटे।)

अधिकांश वस्तुओं का नाम डायरी में नोट किया था । यात्रावृत्त लेखन की तैयारी थी वह। पर कालांतर में गुम गई डायरी जीवन की आपाधापी में...बारम्बार शहर-घर बदलते हुए। संग्रहालय के एकदम निकट एक चीनी रेस्तराँ था। सामने मैदान। पहाड़ को काटकर विकसित किया गया स्थान।

वशिष्ठ मुनि की आश्रयस्थली –

अगले दिन खूब सवेरे हमारी गाड़ी मनाली से महज ३ कि.मी. दूर वशिष्ठ गाँव के एक आवास के पास पार्क हो रही थी। उतरने से पूर्व ही देखा, घर के सामने के पेड़ पर छोटे-छोटे तीखे लाल फल लटक रहे थे।

" अरे! यह क्या है?...ओह! चेरी...चेरी है यह।"

सच में बेहद आह्लादकारी था यह भी। बाजारों की बंदिशों से बाहर पेड़ों के ऊपर...गोल, ताजी चेरी! हम जैसे-जैसे पैदल आगे बढ़ रहे थे, स्थानीय महिलाएँ अपने खरगोशों को लेकर सामने आ जा रही थीं। खरगोश गोद में देने की जिद यहाँ भी। अधिकांश ने पट्टू धारण किया था। सर पर पीछे की ओर बाँधी गई रंगीन फूलदार चुनरी। अगल-बगल में दुकानों में आधुनिक स्थानीय कपड़े, खिलौने, श्रृंगार सामग्री, पूजा के सामान सजाए लोग बड़ी हसरत से ताक रहे थे। पूरे बाजार में जगह-जगह भोजनालय अभी सज ही रहा था।

लो, अचानक से एक गदाधारी सामने कूद आया। लाल भभूका! पूरी देह पर लाल रंग पोते, मुँह में वानरोंवाला मुखौटा लगाए, लम्बी नकली पूँछ और लँगोटधारी सिंकिया नौजवान किसी भी तरह से हनुमान जी के आकार-प्रकार से मेल नहीं खा रहा था। बजरंग बली किसी भी तरह से उस बीमार से बहुरुपिया नौजवान में फिट नहीं बैठ रहे थे। फिर भी उछल-कूद मचाए हुए था। पीछा छुड़ाकर हम बढ़े आगे, वह दुकानों की ओर।

मोड़ मुड़ते ही बाईं तरफ लकड़ी से निर्मित एक अति प्राचीन मंदिर का द्वार...हाँ, महान् मुनि वशिष्ठ के आश्रम के बाहर खड़े थे हम। अंदर जाते ही दाहिनी तरफ एक छोटी सी जगह में गंधकयुक्त जल से स्नान करते लोग दिखलाई पड़े। हम और आगे बढ़े। आँगन के पार सामने एक पथरीले बरामदे पर विदेशी साधु पद्मासन में बैठे...ध्यान में लीन। छत भी पथरीली टाइल्स की बनी लग रही थी। हमारे बीच का कोलाहल उन तक नहीं पहुँच रहा था। वे इन सबसे बेखबर थे। एक मुस्कान तिर आई हम सबके होठों पर।

फिर दाहिने ओर बने देवालय के पास जा पहुँचे। एक 'पुजारिन' आरती की थाल के पास आलथी-पालथी मारे बैठी थी। भीतर अँधेरी सी कोठरी में आराध्य। उसने हाथों में प्रसाद थमाया और अपनी भाषा में कुछ कहा।

समझ पाना बहुत मुश्किल था। दुकानों, खेतों से लेकर हर तरफ पूर्वोत्तर पर्वतीय क्षेत्रों में महिलाओं की उपस्थिति...अनेक राज्यों में मातृसत्तात्मक शक्ति का एहसास होता रहा है। यहाँ भी देखकर अच्छा लगा।

आनन्द गंधकयुक्त जल से पवित्र स्नान करने के लिए गाइड वहीं रुक गया, हमें बताकर कि सामने ही राम मंदिर है। हम सभी वहाँ जाएँ। वह थोड़ी देर में मिलता है।

राम मंदिर की सीढ़ियों पर एक गोल-मटोल बच्चा पानी का नलका खोल सीधे मुँह लगाकर पानी पीते हुए दिखा। हम सबके पाँवों की धमक भी उसका ध्यान भंग नहीं कर सकी। वह नलके से खेलता रहा। यह प्रसिद्ध देवालय राम, लक्ष्मण, सीता की कहानी कह रहा था। खुले परिसर के बाईं ओर बने देव स्थान में तीनों की आकर्षक मूर्तियाँ बिराजमान हैं। वहीं लगे बोर्ड को पढ़ने पर उसके इतिहास से परिचय हुआ।

व्यास नदी के किनारे स्थित वशिष्ठ गाँव में वशिष्ठ मुनि की साधना स्थली से मिलना बहुत अच्छा लगा। किंवदंती है - बाल अपराधों से त्रस्त होकर ऋषि श्रेष्ठ वशिष्ठ व्यास सरिता में आत्महत्या करने पहुँच गए लेकिन नदी ने उनका बलिदान लेने से इंकार कर दिया। तब वे यहीं रह तप-जप किया करते थे। जिन पौराणिक पात्रों को हम ग्रंथों के पन्नों में कैद पाते रहे थे, वे यहाँ जीवंत हो उठे थे। 'यूँ ही नहीं कहते हिमाचल प्रदेश को देवभूमि!' - सबके मन में था। यह गाँव सल्फर के सोते के लिए मशहूर है। कहा जाता है कि लक्ष्मण ने इसी भूमि में तीर चलाकर इस सोते को उत्पन्न किया था।

मनाली के पर्यटन स्थल अपने सौंदर्य में लीन करने के साथ-साथ ट्रैकिंग, पैराग्लाइडिंग, राफ्टिंग आदि का भरपूर आनंद भी दिलवाते हैं। अनुभा ने एक जगह रस्सी के सहारे उलटे लटककर विपाशा नदी पार की। यह वास्तव में आवागमन का एक सुलभ साधन है। हहराती, लपकती नदी के ऊपर से एक-दूसरी जगह जाने का आसान उपाय। अभी भी मनाली के अनेक किशोर, बच्चे यूँ ही नदी पार कर रहे थे। कालांतर में व्यापार का साधन भी बन गया। यहाँ पर इसका आन्नद लेने पर्यटकों की टोली टूटी पड़ रही थी। मनाली के स्थानीय किशोर-युवा पर्यटकों को भी रस्सी से उलटे लटककर व्यास को नापने के इंतजाम में व्यस्त दिखे। हाँ, उसके लिए लोग खुशी-खुशी पैसे दे रहे थे। हम नदी के किनारे हर थोड़ी दूर पर यह सब देखकर हैरान भी हो रहे थे, प्रसन्न भी। इस परिसर में जैसे विपाशा के हर तट पर लोगों का हुजूम रस्सियों के सहारे झूल रहा था।

यहाँ के सुपरिचित सोलंग घाटी में स्फूर्ति संग रोमांच का अनुभव हुआ। सोलंग घाटी व्यास नदी और सोलंग गाँव के बीच में स्थित है। यहाँ पैराशूटिंग से लेकर पैराग्लाइडिंग तक, घुड़सवारी से लेकर ओपन एयर जीप चलाने तक, सब कुछ करने की सुंदर व्यवस्था है। सर्दियों में हर जगह बर्फ से ढँकी होती है। इस दौरान यात्रीगण स्कीइंग करते हैं। गर्मियों में बर्फ पिघलने पर एक पारदर्शी बड़ी गेंद के अंदर दो लोग बैठकर जब घाटी से लुढ़कते हुए आते हैं तो रोमांच दोगुना हो जाता है। सोलंग आकर उसकी रमणीयता से मिल हम सभी और भी ताजादम हो गए।

मनाली में कई जगह स्नोबोर्डिंग और स्लेजिंग की उत्तम व्यवस्था पर्यटकों का दिल जीत लेती है। बेहद नयनाभिराम दृश्य। मनाली में हर जगह सेबों के बागीचे में कच्चे-खट्टे सेब वृक्षों पर लट्टुओं से लटके थे, एक अनिर्वचनीय आन्नद की सृष्टि करते हुए।

हम शामें मनाली माल रोड के नाम भी लिख चुके थे। एक तरफ सघन व्यापारिक केंद्र...वस्त्रों की दुकानें। तिब्बती गर्म कपड़े बिक रहे थे। हमने उपहार देने के लिए अनेक शॉलें, कढ़ाईदार गर्म सूट पीस लिये। बौद्ध भिक्षुक हर स्थान पर घूमते दिखलाई पड़े। पास में बौद्ध मठ रहने के कारण। पुल से दाहिनी ओर माल रोड जाने पर पार्क

में फव्वारों से नहला देते जल की सुखद फुहार ने तन के साथ मन को भी भिगो डाला। किसी नृत्य की तैयारी में व्यस्त पीले परिधान पहने, ढोलक और वहाँ के वाद्य यंत्र हाथों में थामे नर्तकों की टोली नजर आई। दुकानों में बौद्ध धर्म के अनुयायी दुकानदार भी। हम हर शाम दूर तक पैदल ही निकल जाते। मनाली का माल रोड शिमला के माल रोड की तरह भव्य तो नहीं लगा लेकिन वहाँ शाम बिताना सुखदायी था।

मनाली-शिमला में कई स्थानों पर लोग हिमालयी औषधीय जड़ी-बूटियों को अपने बैगों में भरकर बेचते मिले। इतना ही नहीं, बाद में भी सम्पर्क कर जड़ी-बूटियाँ पहुँचाने के लिए वे यात्रियों से पता, फोन नं. आदि ले रहे थे। दरअसल ऐलोपैथिक इलाज ने वैद्यों की पेट पर लात मार दी है। और यह उनके संघर्ष का एक नया तरीका है। अब वैद्य की दुआरी लोग जाते नहीं तो वैद्य या उनके एजेंट ही आपके पास जा पहुँचते हैं। आयुर्वेदिक दवाओं के फायदे के कायल ओम जी ने कई बार बाद में भी उक्त एजेंट से घर पर ही हिमालयी जड़ी-बूटियाँ मँगाईं, जिससे पहले ही दिन खरीदी थी।

मनाली से २१ किलोमीटर दूर सुप्रसिद्ध नगर तथा अन्य जगहों को देखते हुए हम रंग-बिरंगी ताजगी भर देने वाली वादियाँ, ऊँचे पहाड़ों पर पड़े रूई जैसे बादल, परतदार खेतों की हरी चादर आदि से मिल रहे थे। नगर का मुख्य आकर्षण एक किला है। इसकी स्थापना राजा विशुद्पाल द्वारा की गई थी। अब इस किले को हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम द्वारा एक हेरिटेज होटल में बदल दिया गया है।

अनेक आकर्षक स्थलों से मिलने के बाद लौटते समय कुल्लू का मार्ग पकड़ा हमने। सुबह का उजास फैल चुका था। मनाली की गलियों में कुछेक लोग अपनी किन्नौरी टोपी माथे पर सजाए काम में मशगूल दिखे। यह वही कुल्लू है, जिनके प्रत्येक गाँव-कस्बे के अपने-अपने देव हैं और दशहरे के वक्त सभी देवता कुल्लू के मेले में शामिल होकर एक अद्भुत नजारा पेश करते हैं। अज्ञेय जी ने इस पर विस्तार से लिखा है, वह याद की जमीन पर जो अँकुराया, देर तक बना रहा। कुल्लू को मनाली की बहन कहा जाता है। इस राह पर विपाशा नदी में राफ्टिंग करते अनेक लोगों को देखा। लगा, जैसे नदी हमारे संग-संग चल पड़ी है। कहीं-कहीं एकदम बगल में आकर उत्सुकता से भर देती, उत्साह बढ़ा देती। इस मार्ग में भी गड़ेरिये पाँव-पैदल जाते मिले। अकेले नहीं, भेड़ों और बकरियों के साथ। इधर भी पर्वत हिम का लबादा उतार रहे थे। या फिर केंचुल कहें?

रास्ते में एक खेत में ऊपर से उतरती दो स्त्रियाँ दिखलाई पड़ीं। उनके सर पर घास के बड़े-बड़े गट्ठर...मैंने तत्काल गाड़ी रूकवाई। वे बहुत ऊँचे वाले खेत से नीचे के खेत में कदम रख रही थीं कि लगभग दौड़ते हुए उनके पास जा पहुँची। वे दोनों पट्टू नहीं, कुर्ती-सलवार में थीं। लेकिन सर पर वही रंगीन छापेदार कपड़े की चोटी। श्रम की अद्भुत मिसाल बन भर दिवस खेतों में निराई-गुड़ाई, सिंचाई करनेवालियाँ। वे मवेशी के लिए ताजी घास लेकर लौट रही थीं। मिलते ही उनके स्वेद से चमकते गौरवर्णी ललहुन चेहरे पर हँसी के चंद्र खिल उठे और वे चाँद-सी दमक उठीं। मैंने महसूस किया है, सबसे अधिक निर्मल और निश्छल हँसी इन्हीं श्रम की मिसाल वामाओं को प्रदान किया गया है। बस, थोड़ी सी बतकही के साथ ही ये श्रमरत स्त्रियाँ फिक् से हँस पड़ती हैं...हाँ, देश के किसी भी कोने की हों।

आजकल हिमालय प्रदेश के इलाकों में होटल उद्योग भी महिलाओं की कर्मठता से खूब फल-फूल रहा है। लोग अपने घरों को ही होटल बना दे रहे हैं।

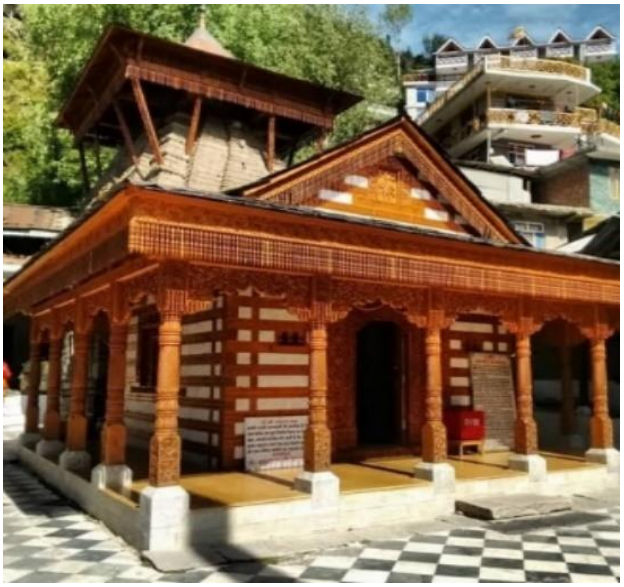

प्रगति का अक्षय मंत्र

राजेन्द्र शर्मा

प्रथम प्रभु का ध्यान कर
फिर लक्ष्य पर संधान कर
मस्तिष्क में दृढ़ ठानकर
मंज़िल तरफ़ प्रस्थान कर।

न ध्यान हो इधर-उधर
न भटकना कभी डगर
प्रयास कर, अभ्यास कर
निरंतर ....निरंतर.....।

हो चाह शुद्ध प्रखर मुखर
उत्साह ज्यों अचल शिखर
प्रतिभा स्वयं होगी निखर
प्रगति के पथ होगा सफ़र।

हैं जो बड़े, सम्मान कर
झुक मातृ-भू का मान कर
बेशक से स्वाभिमान कर
ना भूल कर अभिमान कर।

जीवन भी है हर पग समर
लड़..., हार न स्वीकार कर
तानकर हिम्मत का शर
कठिनाइयों पर वार कर

ईश्वर को अर्पित कर्म कर
नि:स्वार्थ सारे धर्म कर
एक बार कर ले देख कर
जीवन बनेगा अग्रसर ।

सत्य ही शिव सुंदर
सत्य ही अपराजय अमर
सत्य की ही खोज कर
सत्य ही बस वद, चर।

भारत में उच्च शिक्षा का निजीकरण घातक

गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'

उच्च शिक्षा ज्ञान का स्रोत मानी जाती है। शिष्ट, सभ्य और शालीन बनाने के साथ ही आजीविका एवं उच्च पद प्राप्त करने का यह एक महत्वपूर्ण साधन है। इसका उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी उच्च शिक्षा से अपने जीवन का विकास तो करे ही, साथ ही समाज के कल्याण के लिए प्रयास भी करे।

यों कहने को देश में उच्च शिक्षण संस्थाओं, जैसे विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की बहुतायत-सी है तथा इन उच्च शिक्षण संस्थाओं में छात्रों की प्रवेश - संख्या भी तेजी से बढ़ी है, परंतु इसके साथ ही प्रश्न यह भी है कि इन संस्थाओं में प्रदत्त शिक्षा की गुणवत्ता कैसी है, क्योंकि विद्यार्थियों में अपने विषय के प्रति जानकारी और कौशल की कमी स्पष्ट झलकती है।

स्वामी विवेकानंद ने शिक्षा के विषय में कहा था - "हम ऐसी शिक्षा चाहते हैं, जिससे चरित्र का निर्माण हो, मस्तिष्क की शक्ति में वृद्धि हो, बुद्धि का विस्तार हो और जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके।"

आज हम वैश्वीकरण के युग में जी रहे हैं। वैश्वीकरण में निजीकरण की निर्णायक भूमिका है। पहले जैसे राष्ट्रीयकरण को रामबाण माना जाता था, वैसे ही अब निजीकरण को। बीच का रास्ता निकालने वाले दोनों के समन्वय अर्थात पब्लिक – प्राइवेट - पार्टीसिपेशन (पी पी पी) की बात करते हैं

विभिन्न शिक्षा संस्थानों में यह प्रयोग अत्यंत घातक सिद्ध हो रहा है। उच्च शिक्षा का तेजी से निजीकरण हुआ है। जब से 'सेल्फ फाइनेसिंग' का उपाय खोजा गया है, तबसे देश के विभिन्न प्रांतों में हर जिले में कई-कई निजी विद्यालय खुलते जा रहे हैं। अब यह बाढ़ निजी विश्वविद्यालयों तक पहुँच गई है।

नेशनल नॉलेज कमीशन के अनुसार अगले दस वर्षों में लगभग २००० विश्वविद्यालयों की आवश्यकता पड़ेगी। विद्यार्थियों और अभिभावकों की माँग है कि नये-नये विषय पढ़ाए जाएँ जिससे नौकरी के नये अवसर बढ़ सकें। भारत में मध्य वर्ग और उसकी सही-गलत आय का विस्तार होता जा रहा है। इस वर्ग के विद्यार्थी विदेशों के निजी विश्वविद्यालयों की ओर मुड़ चुके हैं। जो विदेश में शिक्षा ग्रहण करने का खर्च वहन नहीं कर सकते, उनके लिए देश में ही निजी विश्वविद्यालयों की बाढ़ आई है। वहाँ वादा किया जा रहा है कि विदेशों जैसी गुणवत्ता ३ से ५ लाख रुपये वार्षिक व्यय में उपलब्ध होगी।

शिक्षा में मुख्य मुद्दा है गुणवत्ता का। 'क्वालिटी एजूकेशन' का शोर तो बहुत है किंतु धरातल का सच यही है कि भारत के नामी विश्वविद्यालयों में भी अपेक्षित गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध नहीं है। ऐसी संस्था से निकले विद्यार्थी अपने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में पिछड़ते जा रहे हैं। ऐसे शिक्षण केंद्र केवल डिग्रियाँ बाँटने वाली संस्थाएँ बनकर रह गई हैं। विश्व की ५०श्रेष्ठ संस्थाओं में भारत की एक भी संस्था का नाम नहीं है, ऐसे में निजी विश्वविद्यालय इसी दावे के साथ खोले जा रहे हैं कि वहाँ गुणवत्तापूर्ण उच्च स्तरीय शिक्षा दी जाएगी।

देश में निजी विश्वविद्यालय तो खुलने लगे किंतु इनमें पठन-पाठन पर सरकार की किसी नीति का कोई प्रभाव नहीं है। इनमें भारी-भरकम फीस लेकर शिक्षा बेची जा रही है। साधारण व्यक्ति के लिए इन संस्थाओं में बच्चों को पढ़ा पाना सम्भव नहीं है। इस प्रकार देश में दोहरी शिक्षा व्यवस्था है, जहाँ अमीर और गरीब, दोनों वर्गों के लिए अलग-अलग व्यवस्था चल रही है।

हमारी उच्च शिक्षा पूर्णतः बाजारीकरण के चंगुल में फँस चुकी है। आश्चर्य है कि यह सब भारत जैसे लोककल्याणकारी राजव्यवस्था वाले देश में हो रहा है। शिक्षा का समानता का आधार, शिक्षा सबका अधिकार, मूल्यपरक शिक्षा जैसे विषयों की घोर अवहेलना हो रही है। अनेक उद्योगपतियों, नेताओं, प्रशासनिक अधिकारियों और धर्माधिकारियों ने अकूत धन का निवेश करते हुए शिक्षा को भी एक उद्योग के रूप में अपना लिया है। सिनेमा हॉल, कोल्ड स्टोरेज जैसे व्यवसाय बंद करके व्यवसायियों ने शिक्षा संस्थान खोल लिए हैं।

स्ववित्तपोषित योजना केवल निजी संस्थानों में ही नहीं, अपितु सरकारी विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में भी प्रभावी है। इसका संचालन निजी प्रबंधन द्वारा किया जाता है जिसमें बड़े पैमाने पर धन उगाही, शिक्षकों और छात्रों का शोषण होता है। सरकार का यह सौतेला व्यवहार उच्च शिक्षा को नष्ट-भ्रष्ट कर रहा है।

हमारी सरकारी नीतियों के कारण उच्च शिक्षा गरीब विद्यार्थियों से दूर होती जा रही है। भारतीय प्रौद्योगिकी तथा प्रबंध संस्थान (आईआईटी, आई टी, आई आई एम) ने फीस इतनी बढ़ा दी है कि देश के श्रेष्ठ और अभिजात्य संस्थानों के दरवाजे आम आदमी के लिए लगभग बंद हो चुके हैं।

बीसवीं शताब्दी में नौकरी की गारंटी देने वाले विषयों का महत्व बढ़ा तो कुछ ऐसी संस्थाओं को भी विश्वविद्यालय घोषित किया गया जहाँ कुछ विशिष्ट विषयों की पढ़ाई होती थी, जैसे रुड़की के भारत के पहले इंजीनियरिंग कॉलेज को विश्वविद्यालय घोषित किया गया। कुछ संस्थाओं को 'डीम्ड यूनिवर्सिटी' अर्थात् विश्वविद्यालय जैसी संस्था कहा जाने लगा। इस प्रकार विश्वविद्यालयों में भी स्तर के नाम पर विभेदीकरण लागू हो गया।

उच्च शिक्षा के निजीकरण से सम्बंधित विसंगतियों को दूर करने के लिए निजी विश्वविद्यालयों विषयक कतिपय विंदुओं पर उच्च स्तरीय विमर्श आवश्यक है जिससे शिक्षा को जनहितकारी, सर्वसुलभ और गुणवत्तापूर्ण बनाया जा सके -

--संस्थाएँ पूर्णतः निजी पूँजी द्वारा संचालित हैं और इनमें प्रायः एक व्यक्ति या परिवार की पूँजी लगी है।

--निजी विश्वविद्यालयों में व्यवसायपरकता पर जोर है, तो क्या विद्यार्थियों को शिक्षा पूर्ति के बाद व्यवसाय या नौकरी के अवसर उपलब्ध हो रहे हैं।

--इसमें उत्कृष्टता का विज्ञापन किया जा रहा है, तो क्या उत्कृष्ट परिसर, उत्कृष्ट शिक्षक, उत्कृष्ट प्रयोगशालाएँ और सुसज्जित पुस्तकालय उपलब्ध हैं।

--फीस की पहुँच सामान्य नागरिक और निम्न मध्यम वर्ग तक सहज सुलभ है, कोई डोनेशन या गुप्त दान का प्रचलन तो नहीं है।

--देश के विश्वविद्यालयों को सरकार समुचित अनुदान उपलब्ध कराए जिससे वे विद्यार्थियों को अपेक्षित रियायतें दे सकें।

--उच्च शिक्षा के लिए जितने संस्थानों की आवश्यकता हो, बढ़ती संख्या के पूर्वानुमान के अनुसार सरकारें उतने संस्थान और विश्वविद्यालय उपलब्ध कराने का प्रयास करें।

--उच्च शिक्षण संस्थाओं में शिक्षक, विद्यार्थी, पाठ्यक्रम और प्रशासन के बीच समुचित सामंजस्य हो, जिससे कहीं कोई व्यतिक्रम हो तो उसे समयपूर्व ठीक किया जा सके।

--विश्वविद्यालयों का वातावरण स्वच्छ, अनुशासित और कल्याणकारी रहे, शिक्षा के मंदिरों को अराजकता या राजनीति के अड्डे न बनने दें।

--संस्थाओं से शिक्षा प्राप्त कर विद्यार्थी अपना उद्यम पा सके तथा समाज एवं राष्ट्र को योग्य तथा प्रतिभावान नागरिक मिल सकें, जो राष्ट्र के विकास के लिए कटिबद्ध हो सकें।

शिक्षा 'व्यापार' नहीं, अपितु 'सेवा' है, इसलिए निजी संस्थाएँ भी शिक्षण संस्थाओं को अपने व्यापार के रूप में नहीं चला सकतीं। अपनी शिक्षण संस्थाओं पर निगरानी रखने के लिए व्यापक तंत्र उपलब्ध है, किंतु विदेशी संस्थाओं के सम्बंध में केवल यह कहा गया है कि वे ऐसे पाठ्यक्रम संचालित नहीं करेंगी जो राष्ट्रीय हित के प्रतिकूल हों। यह शब्दावली अस्पष्टता की सीमा तक व्यापक है। अतः इसके लिए नियामक संस्था बनाने पर विचार किया जा सकता है।

आवश्यकता इस समाधान की है कि उच्च शिक्षा साधारण नागरिक को भी कैसे उपलब्ध करायी जा सके। लक्ष्य तो यही होना चाहिए कि समस्त शिक्षा उत्कृष्ट हो और वह सबको उपलब्ध हो। राष्ट्र हित की उच्च इच्छा-शक्ति से यह कठिन अवश्य है, किंतु असम्भव नहीं।

रघुनायक के प्रति

डॉ.ऋतु माथुर

हे कृपानिधान, दीनदयाल, भक्त रक्षक, सर्वशत्रु विनाशक, मोक्षदायक, मंगलतक्षक।

सर्वसृष्टा, सर्वज्ञ, सर्वांग, दृष्टिधारक, अनंत अगोचर, अविकारी, अविनाशक।

शरणात्राण, खरध्वंसी, दशाग्रीव संघारक, पितृ भक्त, कौशलेय, विश्वामित्र-प्रिय हरकोदंड खंडक।

सर्वहितैषी, त्रिलोकरक्षक, कष्ट निवारक, सुजन हित हेतु, दुर्जन नाशक।

लौकिक, अलौकिक दंड विधायक, सत्यरूपी, शुभकारक, शिरोभूषण के धारक।

परमानंद, परमाछवि, शुभ प्रतिपादक, अनादि आगम सृष्टि नियामक।

परमोत्कर्ष, परिदर्शन विश्व परिधायक, अद्भुर हृदय, महा फलदायक।

ऋतु नियंत्रक, भाग्य निर्णायक, अक्षय नमन तुम्हें रघुनायक।

कहाँ रहें भगवान ?

महेश शर्मा धार

बडे परेशान थे भगवान । भक्तों ने उनका चैन से रहना मुश्किल कर रखा था । दिन रात पूजा अर्चना, भजन भाव, शोरगुल अलग-अलग मन्नतें, इच्छाएँ, वायदे, आग्रह, इनका कोई अन्त ही नहीं था । भगवान कितनी भी इच्छाएँ पूरी करें, समस्याएँ मिटाएँ, मनुष्य की माँग खत्म ही नहीं होती थीं। आखिरकार भगवान ने अपने कुछ विश्वस्त देवताओं को बुलवाकर सारा विवरण देते हुए प्रश्न रखा कि क्या करना चाहिये मुझे, कहाँ रहना चाहिये?

पहले तो सारे देवता आश्चर्यचकित हुए, मुस्कराए और बोले, प्रभु! आपको रहने की चिन्ता कैसी, मनुष्य ने तो बडे बडे मन्दिर, देवालय आदि बनवा रखे हैं आपके रहने के लिये ।

“वही तो समस्या है । मनुष्य मुझे इन पुजागृहों में कैद कर दिन-रात परेशान करता है, वहीं से तो बचना है मुझे। अब देवताओं को समझ में आ गया कि समस्या गम्भीर है । एक देवता ने सुझाव दिया, भगवन! आप कुछ समय के लिये स्वर्ग का मोह छोडो और घनघोर जंगलो में वास करो; वहाँ मनुष्य का दखल नहीं होगा । प्रभु मुस्कराये, बोले मेरा निवास पहले वन-उपवन ही हुआ करता था लेकिन अब जंगल कहाँ बचे और जो बचे हैं वहाँ भी मनुष्य अक्सर शिकार करने या लकड़ियों के लालच में जाता रहता है बल्कि क्या कहें वो जंगल सफारी करने जाता है । जंगल अब पहले जैसे वीरान नहीं रहे ।

एक अन्य देवता का सुझाव था कि प्रभु अनन्त गहराइयों वाले समुद्र में निवास करें । प्रभु कुछ चिढ़-से गये इस सुझाव पर । आप नहीं जानते क्या कि मैने क्षीरसागर का अपना स्थाई निवास क्यों छोडा । पूरे समुद्र को इन आधुनिक मछुआरों ने, जहाजों ने और कई देशों की पनडुब्बियों ने मथ डाला है वहाँ अब बिलकुल भी शांति नहीं है सारी समुद्र महा शक्तियों के युद्ध स्थल बन चुके हैं ।

प्रभु! तभी एक अन्य विद्वान देवता ने कहा हमारे अन्तरिक्ष में विचरण करते ये ग्रह कब काम आयेंगे? आप किसी भी ग्रह पर अपना ठिकाना बना लीजिये ।

बडी निराशा से भगवान ने अपने देवता के अल्प ज्ञान पर दु:ख जताते हुए बताया कि पृथ्वी के बाद सबसे ज्यादा अशांति कहीं है तो वो आकाश ही है । हमारे समय में केवल एक पुष्पक विमान ही हुआ करता था आज आकाश में इतने विमान, राकेट, प्रक्षेपास्त्र, और ना जाने क्या-क्या यंत्र हैं जो लगातार आकाश में घूम रहे हैं जिनसे सारे ग्रह आक्रांत हैं, वहाँ तो जरा भी चैन नहीं है।

अब तो सारे देवता चुप थे, बडा जटिल प्रश्न था भगवान कहाँ रहें ?

तभी एक बूढे से देवता ने खड़े होकर बडे आत्मविश्वास से कहा मेरे पास इसका हल है प्रभु ।

"आप सब झंझट छोडिए और मनुष्य के दिल में रहना शुरु कर दीजिये ।"

सभी देवता चौंके, भगवान ने भी साश्चर्य पूछा "क्या मतलब मनुष्य के दिल में? मैं मनुष्य से ही तो बचना चाहता हूँ ।"

तभी तो मै कह रहा हूँ भगवन, मनुष्य आपको सारी दुनिया में खोजेगा लेकिन खुद के दिल को कोई बिरला ही टटोलेगा जो आपका सच्चा भक्त होगा और सच्चे भक्त से तो आप भी हमेशा मिलना चाहते हैं ।

बात तो सही कह रहे हो तुम, भगवान सोच मे पड़ गये । बहुत सटीक और उत्तम सुझाव था। खुद के दिल में तो कोई महाज्ञानी ही ईश्वर को खोजेगा। भगवान ने यह सुझाव तुरन्त मान लिया । और उसी दिन से भगवान मनुष्य के दिल में रहने लग गये ।

सौदा

राम नगीना मौर्य

जैसा कि हम सब भली-भाँति वाकिफ हैं, मकान बनवाने के काम में अमूमन आर्किटेक्ट, मजदूर, राजमिस्त्री, प्लम्बर, इलेक्ट्रिीशियन सहित बालू, सीमेण्ट, सरिया, ईंट, गिट्टी, मोरंग, के साथ-साथ बाँस, बल्ली, चाहली, सीढ़ी, पटरों आदि मकान-सामग्री की भी आवश्यकता पड़ती है।

हमारे मकान के निर्माण-कार्य की देख-रेख एवं उससे जुड़े सारे काम-काज पिताजी ही देख रहे थे, साथ ही इंजीनियर होने के नाते आर्किटेक्ट सम्बन्धी कार्य भी उन्हीं के मार्ग-दर्शन में चल रहा था।

भूतल की छत पड़ जाने के उपरान्त, लिण्टल से सम्बन्धित ढाँचे को अमूमन महीने-भर के अन्दर खोल देना था, लेकिन शहर में अचानक कर्फ्यू लग जाने के कारण बाँस, बल्ली, चाहली, सीढ़ी, पटरों की देख-रेख, चैकीदारी के लिए हमारे राजमिस्त्री हीरालाल और एक मजदूर को छोड़कर, बाकी सभी मजदूर अपने-अपने गाँव चले गये। इन्हीं सब कारणों से लगभग ढ़ाई महीनों से छत की ढ़लाई में प्रयुक्त किये गये बाँस, बल्ली, चाहली, सीढ़ी, पटरे, आदि बिल्डिंग-मैटेरियल्स भी नहीं हटाये जा सके। शहर में कर्फ्यू लगा होने की वजह से इनका किराया दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा था। तिस पर कोढ़ में खाज ये कि सरन बिल्डिंग-मैटेरियल्स के मालिक का लड़का सुरेन्द्र लगभग आये दिन ही इन बिल्डिंग-मैटेरियल्स के किराये के लिए तगादा करने हमारे प्लॉट पर चला आता। हमारे समक्ष अजीब पशोपेश वाली स्थिति थी। पिताजी को कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि इस आकस्मिक विपदा से कैसे निबटा जाय?

एक दिन दोपहर में अर्द्धनिर्मित अपने मकान के आगे स्थित नीम के पेड़ के नीचे, मन्द-मन्द चल रही मलय-समीर के बीच चारपाई पर लेटे-लेटे ही पिताजी ने कुछ गुणा-भाग किया। उन्होंने अंदाजा लगाया कि छत की ढ़लाई में प्रयुक्त इन बिल्डिंग-मैटेरियल्स का अब तक जितना किराया हो गया होगा, उतने में तो हम ये सारा बिल्डिंग-मैटेरियल्स नये सिरे से भी खरीद सकते हैं। यही सब जोड़-घटाव, गुणा-भाग लगाते हुए अगले दिन दोपहर को पिताजी सरन बिल्डिंग-मैटेरियल्स की दुकान पर ही जा पहुँचे।

"सरन साहब, नमस्कार।" दुकान पर काउण्टर के पीछे अपनी कुर्सी की पुश्त से सिर टिकाए सरन साहब लगभग ऊँघ-से रहे थे। छत से टँगा सीलिंग-फैन, जो आवाज ज्यादा कर रहा था, लेकिन हवा धीमें-धीमें दे रहा था, हौले-हौले घूम रहा था।

"जी, बाउजी! नमस्कार। आप सहाय साहब है न?" अधखुली नींद से जागते हुए सरन साहब ने पिताजी से लगभग अकबकाते हुए पूछा।

"जी, सही पहचाना आपने।" पिताजी ने उन्हें मुस्कुराते हुए आश्वस्त किया।

"कैसा चल रहा है, आपके मकान का कार्य?" सरन साहब को जैसे कुछ याद आया हो। उन्होंने ये औपचारिक सा प्रश्न दागा।

"अजी, कैसा चलेगा? आप तो जानते ही हैं कि हमारे मकान के भूतल की छत की ढ़लाई का कार्य जैसे ही पूरा हुआ, उसके सातवें दिन ही शहर में कर्फ्यू लग गया। मजदूर भी सभी काम छोड़-छाड़ कर अपने-अपने गाँव चले गये। अब ऐसे में जो लिण्टल लगभग महीने-भर के अन्दर खुल जाना चाहिए था, मजदूरों के अभाव में लगभग ढ़ाई महीने से अटका पड़ा है। तिस पर बिल्डिंग-मैटेरियल्स का आपका किराया अलग से दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है।"

"सहाय साहब, ये तो आपने एकदम सही बात कही। लेकिन, मकान बनवाने के काम में तो ये सब घट-बढ़ चलता ही रहता है। लागत हम यदि एक मान कर चलते हैं, तो खर्चा अमूमन उसके डेढ़-गुने से ज्यादा ही हो जाता है। अब हमें ही देखिये! कोई भी बिजनेस कीजिए, ढ़ेरों अनिश्चितताओं से भरा होता है। लेकिन मुझे लगता है कि ये बिल्डिंग-मैटेरियल्स के बिजनेस का काम तो और भी अनिश्चितताओं वाला है।" सरन साहब ने पिताजी की बातों को निरपेक्ष-भाव से लेते, अपना ही रोना रोते, अपनी तरफ से ये बहुमूल्य विचार व्यक्त किये।

"सही कह रहे हैं सरन साहब।" पिताजी ने महसूस किया कि मजदूरों के अभाव में महीनों से अटके काम और दिन-ब-दिन बिल्डिंग-मैटेरियल्स के बढ़ते किराये में किसी तरह की रियायत देने के मुद्दे पर, सरन साहब किसी भी तरह के समझौते के मूड में नहीं हैं, और न इस दिशा में अपनी तरफ से उन्होंने कोई दिलचस्पी ही दिखाई।

"अब देखिये न सहाय साहब! इस काम को शुरू करने से पहले मैं भी आपकी ही तरह सरकारी सेवा से रिटायर हुआ था। रिटायरमेण्ट के समय लड़के-बच्चे अभी छोटे ही थे। किसी काम धण्धे में नहीं लगे थे। ऐसे में परिवार चलाने, बच्चों के खाने-कमाने की व्यवस्था होने तक के लिए मुझे रिटायरमेण्ट के बाद भी कोई-न-कोई बिजनेस तो शुरू करना ही था। दोस्तों से सुझाव के बाद ये बिल्डिंग-मैटेरियल्स का काम शुरू किया तो ढ़ेर सारा बिल्डिंग-मैटेरियल्स उधार में ही लाना पड़ा। अजीब टेढ़ा काम है यह। दसियों बार तगादा करने पर भी आज-कल करते, लोग समय पर पूरे पैसे नहीं देते। हमेशा सिर पर किसी-न-किसी का उधार चढ़ा ही रहता है।" इस बार हाव-भाव से सरन साहब कुछ निराश-हताश से भी दिखे।

"अब ये तो कमोबेश हर बिजनेस में लगा रहता है। कोई भी बिजनेस करेंगे, उधार-खाता तो चलता ही रहता है।" पिताजी ने उन्हें बीच में ही टोकना चाहा।

"मेरी पूरी बात तो सुनिये! बिजनेस से जुड़े ऐसे बहुत सारे काम हैं, जहाँ उधार-खाता नहीं भी चलता। आखिर, दुकान का किराया, दुकान की देख-रेख के लिए रखे गये दो-दो मजदूरों के नियमित वेतन का खर्चा तो देना ही पड़ता है न? साथ ही ये बिल्डिंग-मैटेरियल्स, सड़क किनारे रखे जाने के वाबजूद प्राधिकरण, पालिका वालों के रोक-टोक, हेन-तेन, अटर-पटर अन्य खर्चे आदि मिलाकर महीने में जितनी कमाई होती है, लगभग उतना

ही खर्च भी हो जाता है।'' ये कहते सरन साहब ने छत्तीस कोण का मुँह बनाते, चेहरे पर ऐसे हाव-भाव लाए, मानो वे बिल्डिंग-मैटेरियल्स के अपने बिजनेस से पूरी तरह ऊब चुके हों।

''यानी कि आपका बिजनेस भी 'नो प्रॉफिट, नो लॉस' पर ही चल रहा है?''

''जी, यही समझ लीजिए। ऊपर से मेरे साहबजादे की आवारागर्दी में कोई कमी नहीं आ रही है। वो तो सुधरने का नाम ही नहीं ले रहा।''

''अरे हाँ! आपके साहबजादे की बात पर याद आया। सुरेन्द्र नाम है न उसका?''

''जी हाँ, क्या कोई गड़बड़ी की उसने?'' यह पूछते, सरन साहब के चेहरे पर चिन्ता और परेशानी के भाव उभर आए।

''नहीं ऐसा कुछ नहीं है। सुरेन्द्र अक्सर मेरी उपस्थिति में या अनुपस्थिति में मकान की सुरक्षा के लिए रखे गये मजदूर से, छत की ढ़लाई में प्रयुक्त बिल्डिंग-सामग्री का किराया आदि माँगने आ धमकता है। कभी-कभी हमारे उस मजदूर से जद्द-बद्द भी बोलने लगता है। मुझे उसके हाव-भाव से उसकी गतिविधियाँ तो संदिग्ध लगती ही हैं, इरादे भी नेक नहीं लगते। मैं सोचता हूँ कि जब उन मैटेरियल्स के किराये का सौदा मैंने आपसे किया है, तो मैं आपके लड़के को कोई धनराशि या किराये के पैसे क्यों दूँ, आपको ही क्यों न दूँ?'' पिताजी ने सरन साहब को विस्तार से समझाना चाहा।

''जी, बिलकुल। आपको उसे पैसे देने भी नहीं चाहिए। बल्कि मैं तो आपको आगाह करने वाला था कि यदि सुरेन्द्र आपके पास उन बिल्डिंग-मैटेरियल्स के किराये के पैसे आदि माँगने या तगादा करने आये तो आप उसे तत्काल मना कर दीजियेगा।'' ये कहते, इस बार सरन साहब की आँखों में खास तरह की चमक दिखी।

''धन्यवाद, सरन साहब। आपने मेरी समस्या का समाधान तो किया ही, सिर से एक बोझ भी कम कर दिया।'' पिताजी भी थोड़ा आश्वस्त हुए।

''वैसे, सच बताऊँ सहाय साहब, तो मैं रोज-रोज की ग्राहकों, मजदूरों की इन चिक-चिक, झिक-झिक से बिल्डिंग-सामग्री के इस बिजनेस से आजिज आ चुका हूँ। सोचता हूँ कि ये सारी सामग्री किसी को बेच-बाच कर कोई दूसरा ढ़ंग का काम-धण्धा शुरू करूँ। मैंने महसूस किया है कि मेरे साहबजादे सुरेन्द्र को भी यह काम पसन्द नहीं है, तभी तो वो जनाब नित-प्रति दुकान पर न बैठने के बीसों बहाने खोजते रहते हैं।'' इस बार सरन साहब ने अपनी दिली व्यथा कह ही डाली।

''अच्छा! ऐसा है?'' मानो पिताजी को मन-वांछित मुराद मिल गयी हो।

''हाँ, मेरे पुत्र जनाब तो लगभग रोज ही कोई नया बिजनेस शुरू करने के आइडिया पर बतियाते, ये अल्टीमेटम भी देते रहते हैं कि अगर हमने जल्द ही कोई नया बिजनेस नहीं शुरू किया, तो वो खुद ही बैंक से या दोस्तों से लोन लेकर कोई नया बिजनेस शुरू कर देगा। कहता है कि मोबाइल, उससे सम्बंधित चीजें या जनरल-स्टोर्स की कोई दुकान खोलिए, ताकि कम मेहनत में ही अधिक पैसे बनाए जा सकें। ये लड़के मेहनत भी तो नहीं करना चाहते।'' सरन साहब ने अपने पुत्र की कार्य-योजना का खुलासा किया था।

"पर सरन साहब, आप ये क्यों भूलते हैं कि बिजनेस कोई भी हो, बिना मेहनत के तो कुछ भी सम्भव नहीं। फिलहाल, ये तो आप पिता-पुत्र का व्यक्तिगत निर्णय होगा, इसमें भला मैं क्या कह सकता हूँ? बहरहाल, आपके पास रखे इन सब बिल्डिंग-सामग्री की कुल कितनी लागत होगी? मेरे एक जान-पहचान वाले बिल्डिंग-मैटेरियल्स का ही बिजनेस शुरू करना चाहते हैं।" बातचीत के इस चरण में पिताजी ने विस्तार से जानना चाहा।

"ज्यादा नहीं, जो थोड़ा-बहुत बिल्डिंग-सामग्री एक-दो जगहों पर मौजूद हैं, और जो यहाँ आपको देख रहे हैं, इन्हें लेकर यही कोई सात या आठ हजार की सामग्री बची है। हाँ, याद आया, कुछ हमारे मकान के अहाते में भी रखी है।" सरन साहब को जैसे कुछ याद आया हो।

"यानी, मोटा-मोटी आपको कुल दस हजार रूपये तक दिलवा दिये जायें, तो आपका काम आसान हो जायेगा?" पिताजी के मन-मस्तिष्क में आशा का संचार हुआ।

"जी, सहाय साहब। आपने एकदम सही हिसाब-किताब लगाया।" ये कहते सरन साहब की आँखों में भी खास तरह की चमक दिखी।

"तो ठीक है, मैं कल अपने दोस्त को लेकर आपके पास हाजिर होता हूँ। तब-तक आप इन मैटेरियल्स को अपने मजदूरों से इकट्ठा करवाकर, एक साथ बंधवा दीजिए, और हाँ! जो सामग्री आपके घर पर अहाते में पड़ी हैं, वो भी मँगवा लीजियेगा।"

"जी, ठीक है।" सरन साहब से ये सौदा तय करके पिताजी खुशी-खुशी वापस आ गये।

.....

"मकान बनने के बाद आप इन बिल्डिंग-सामग्री का क्या करेंगे?" शाम को पिताजी ने हम सबके सामने जब सरन साहब के नये बिजनेस-आइडिया व अपनी भावी योजना के बारे में राज खोले तो हमने पूछा।

"देखो बेटा, मैंने पूरा हिसाब-किताब लगा लिया है। छत की ढ़लाई में हमारे यहाँ सरन साहब के यहाँ से अब तक जो भी सामग्री लगी है, उनका आज के दिन तक का किराया रूपये छिहत्तर सौ हुए। अभी हमारे मकान का भूतल ही बना है। प्रथम और द्वितीय तल भी बनना है। इनकी अभी हमें कम-अज-कम तीन बार जरूरत पड़ेगी। यानी कि एक ही सामान के लिए हमें तीन-तीन बार किराया देना पड़ेगा। गाहे-बगाहे ऐसी आकस्मिक व आपदा वाली परिस्थितियाँ भी आ सकती हैं, जैसी कि अभी आयी हुई है। सरन साहब की दुकान, उनके घर, और एक-दो जगहों पर जो कुछ भी सामान पड़ा है, और जो हमारी साइट पर लगा है, मैंने इन सभी का सौदा दस हजार रूपये में तय कर लिया है।"

"यानी, उनकी बिल्डिंग-सामग्री पर अब हमारा मालिकाना अधिकार होगा? किराया देने के झंझट से भी मुक्ति?" मैंने उत्सुकता जाहिर की।

"बिलकुल।" पिताजी ने आश्वस्त भाव से कहा।

"लेकिन, ये प्रश्न तो अभी भी अनुत्तरित है कि मकान का कार्य पूरा हो जाने के बाद हम इस बिल्डिंग-सामग्री का क्या करेंगे?" मैंने आशंका जताई।

"देखो बेटा। ये तो सामान्य-सी बात है कि मकान का काम पूरा होते-होते इस सामग्री में कुछ टूट-फूट होगी ही। फिर भी हमारे पास इनमें से लगभग सत्तर फीसदी सामान दुरूस्त हालत में तो बचे मिलेंगे ही।"

"हाँ, वही तो। हम उन सत्तर फीसदी सामग्री का भी क्या करेंगे?" इस बार मैंने लगभग खींझते हुए पिताजी से पूछा।

"बताता हूँ। बताता हूँ। तनिक धैर्य रखो। हमारे राजमिस्त्री हीरालाल जी कह रहे थे कि उम्र हो जाने के कारण अब वे राजगिरी के काम में दिक्कत महसूस करते हैं। ऊँची इमारतों में काम करने में दसियों तरह के खतरे रहते हैं। वो बिल्डिंग-सामग्री से ही जुड़ा कोई हल्का-फुल्का काम-धाम शुरू करना चाहते हैं। मैंने उनसे बात कर ली है। मकान का कार्य पूरा हो जाने के बाद मैं ये सारी सामग्री उन्हें दे दूँगा। वो तो अपनी मजदूरी में इनकी कीमत को एडजस्ट करने की बात कह रहे थे, लेकिन मैंने ही उन्हें ये कह कर मना कर दिया कि इस सामग्री से मिले थोड़े से पैसों से हम क्या कर लेंगे? हमारे मकान का निर्माण कार्य आपकी निगरानी में बड़ी ही अच्छी तरह से चल रहा है। अतः ये सामग्री हमारी तरफ से आपको बतौर इनाम होगी।" प्रत्युत्तर में पिताजी ने विस्तार से खुलासा किया।

"वाह! यानी, हींग लगे न फिटकरी, रंग चोखा-ही-चोखा।"

"यही समझ लो...।"

.....

"हाँ, अंकल जी। क्या सोचा है? हमारे किराये के कुछ पैसे आज दे रहे हैं या नहीं?" हम पिता-पुत्र के बीच अभी बातचीत चल ही रही थी कि सरन साहब का लड़का सुरेन्द्र वहाँ अपनी बाइक पर सवार हो पहुँचा।

"अभी तो कुछ नहीं सोचा है बेटा।" पिताजी ने निश्चिन्त-भाव उत्तर दिया।

"क्यों?" सुरेन्द्र ने जिज्ञासा की।

"इस बारे में तुम अपने पिताजी से जाकर पूछना।"

"ठीक है, अंकल जी। आप लोग ऐसे नहीं मानेंगे। लगता है अब मुझे ही कुछ करना होगा।" सुरेन्द्र ने इस बार तनिक तल्खी दिखाई।

"बेटा, इस विषय में पहले अपने पिताजी से जाकर बात तो कर लो। हमारे उनके बीच इस बिल्डिंग-सामग्री के सम्बन्ध में सौदा पक्का हो गया है। कल तुम्हारी दुकान पर आकर सारे पैसे चुकता भी कर दूँगा।" पिताजी ने उसे इत्मिनान से समझाया।

"कैसा सौदा? किसके बीच? आप ये किस सौदे की बात कर रहे हैं?"

"इस बारे में भी तुम्हें कल पता चल जायेगा।" पिताजी, सुरेन्द्र के सामने अपनी योजना का खुलासा नहीं करना चाहते थे।

"ठीक है। मैं कल आप लोगों का अपनी दुकान पर इन्तजार करूँगा।" कहते, भुनभुनाते हुए सुरेन्द्र, अपनी बाइक पर सवार हो, वापस चला गया।

"ई सुरेन्दरवा पूरा अबलह ही है। उसे पता ही नहीं कि ई ससुरा जिस स्कूल में पढ़े होगा, सहाय साहब उहाँ के प्रिंसिपल रहे होंगे...हें-हें-हें।" पास ही खड़े राजमिस्त्री हीरालाल जी ने टहोका-सा लिया। यह सुनकर पिताजी, हीरालाल जी और मेरे चेहरे पर खास तरह की मुस्कुराहट तैर गयी।

सरन साहब का लड़का सुरेन्द्र, फिर कभी हमारे ज़मीन पर नहीं आया। शहर में कर्फ्यू खत्म होने के बाद, हमारे मकान का प्रथम, द्वितीय तल भी शीघ्र बन कर पूरा हो गया। हाँ, बताता चलूँ, हीरालाल राजमिस्त्री का बिल्डिंग-सामग्री का काम भी आजकल ठीक-ठाक चल रहा है।

गीत ये न कहो !

बृज राज किशोर 'राहगीर'

गीत ये न कहो,
इतने बरसों कुछ हुआ नहीं है।।

अनपढ़ थे, चलकर शिक्षित पीढ़ी तक पहुँचे,
शिक्षित से बढ़ तकनीकों तक आए हैं हम।

जब से अपनी ताक़त को पहचान लिया है,
दुनिया के कोने-कोने में छाए हैं हम।

जब से खुद पर लगे हुए प्रतिबंध नकारे,
तब से सपनों पर कोई पहरुआ नहीं है।
गीत ये न कहो,
इतने बरसों कुछ हुआ नहीं है।।

जितना हो सकता था, नहीं हुआ, यह सच है,
हमने भी तो बहुत देर में सच को जाना।

सरकारों से ही रक्खी सारी आशाएँ,
हम खुद क्या कर सकते हैं, यह कब पहचाना।

जब से अपने पंखों पर कर लिया भरोसा,
उड़कर नभ की कौन दिशा को छुआ नहीं है।
गीत ये न कहो,
इतने बरसों कुछ हुआ नहीं है।।

जिन दायित्वों का भी बोझ उठाया हमने,
उन्हें सफलता की परिणति तक पहुँचाया है।

भारतवासी होने में क्या शक्ति छुपी है,
धीरे-धीरे अखिल विश्व को समझाया है।

अब तो सारी दुनिया ही यह मान चुकी है,
हम पर दाँव लगाना कोई जुआ नहीं है।
गीत ये न कहो,
इतने बरसों कुछ हुआ नहीं है।।

गीत ये न कहो,
इतने बरसों कुछ हुआ नहीं है।।

पाश्चात्य राष्ट्रवाद से भिन्न है भारतीय राष्ट्रवाद

विजय रंजन
(सम्पादक 'अवध-अर्चना')

भारतीय राष्ट्रवाद! दो स्वतन्त्र शब्द 'भारतीय' एवम् 'राष्ट्रवाद' का यह स्थूल सामासिक शब्द-बन्ध विशिष्ट सूक्ष्म अर्थबोध वाला एक विशिष्ट प्रत्यय का वाचक है। औ...र, 'राष्ट्रवाद' को स्थूल रूप में परिभाषित करना हो, तो लोचनान्धक विभ्रमों को एक किनारे करके कह सकते हैं कि राष्ट्रवाद 'राष्ट्र का वाद' है। यह 'राष्ट्र-सम्बन्धी वाद' अर्थात् राष्ट्रीय कल्याण, राष्ट्रीय अस्मिता, राष्ट्रीय गौरव का वाद है। राष्ट्रवाद में राष्ट्रिक के राष्ट्र के प्रति प्रेम, समर्पण, उत्सर्ग का भाव या/और ऐसे ही अन्यान्य उदात्त भावों के समवेत को साकार करने का आग्रह समाहित होता है। राष्ट्रवाद एक स्वविश्रान्त भाव-वाचक संज्ञा है। राष्ट्रीय भाव, राष्ट्रीय इयत्ता का भाव, राष्ट्रीय अस्मिता का भाव, राष्ट्रीय गरिमा का भाव और राष्ट्रीय गरिमा/अस्मिता/इयत्ता के साथ-साथ राष्ट्र-कल्याण को समवेत में अक्षुण्ण बनाए रखने का भाव है 'राष्ट्रवाद'।

राष्ट्रीय गरिमाबोध के साथ-साथ राष्ट्र के प्रति समर्पण, उत्सर्ग आदि के समवेत का परिचायक भाव और उससे आगे बढ़ कर 'राष्ट्र-धर्म' है 'राष्ट्रवाद'। धरातलीय स्तर पर इसे राष्ट्रव्यापी राष्ट्रभक्ति वाला 'कॉमन सेन्स' माना जाता रहा है भारतीय मनस्विता में। 'राष्ट्रवाद' राष्ट्र-कल्याण, राष्ट्र-प्रेम या देश-प्रेम मात्र तक सीमित नहीं, बल्कि यह राष्ट्रिक के 'राष्ट्र से भौतिक एवं आत्मिक एकात्म की भावना' है, जिसे वह यथावसर मनसा-वाचा-कर्मणा प्रकट करता है। परन्तु ऐसे भाव/सेन्स जाज्वल्य तभी होते हैं जब राष्ट्रिक राष्ट्र के प्रति आत्मीयता का, आत्म का भाव रख कर राष्ट्रीय, जातीय गौरव के प्रति, जन्मभूमि भारत के प्रति, भारतीयता के प्रति, भारतान्वयवर्धना, राष्ट्राय वर्धय और राष्ट्ररंजन के निर्देश को साकार करे। राष्ट्रिक में ऐसा आग्रह प्रकटतया 'राष्ट्रवाद' अर्थात् 'राष्ट्र के प्रति प्रेम' प्रत्युत 'राष्ट्र के प्रति अनुराग, त्याग, समर्पण, सर्वस्व अर्पण आदि के संश्लिष्ट भाव 'राष्ट्र सर्वोपरि' सदृश संस्कारों से उपजता है। राष्ट्रवादी उद्भावना से स्थानिक सभ्यताओं, आचार, वेशभूषा, भाषा आदि में किंचित् भिन्नता होने की दशा में भी सभ्यता और संस्कृति 'समरूप-समरस' बन जाती है जिसके संस्कार बन जाने पर संश्लिष्ट स्वरूप में जन्मती है राष्ट्र के प्रति समर्पण, राष्ट्रहित में उत्सर्ग की भावना। वस्तुतः देशप्रेम, राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रहित-संरक्षा आदि के भाव राष्ट्रवाद के फलित सदृश हैं। विदेशीय का विरोध भी राष्ट्रवादी उद्भावना से ही वाचाल होता है, लेकिन इसे आनुषंगिक प्रलाभ माना जाता है भारतीय राष्ट्रवाद में।

'भारतीय राष्ट्रवाद' में 'राष्ट्रवाद' की उपरि इंगित विशेषताओं के साथ 'भारतीय' अव्यय जुड़ जाने पर 'भारतीय राष्ट्रवाद' विशिष्ट अर्थबोधों का संवाहक बन जाता है। वस्तुतः राष्ट्रवाद जब अपनी उपरि उल्लिखित विशेषताओं के साथ 'भारती+यता' के ब्याज से राष्ट्र के द्वारा प्रदत्त पोषण, आश्रय, संरक्षण आदि के प्रतिदानस्वरूप भारतीय राष्ट्रिकों के 'राष्ट्र के प्रति कृतज्ञताजनित ममत्वपूर्ण स्वतःस्फूर्त्त कर्त्तव्य' में ढल जाता है, तब राष्ट्रवाद 'भारतीय राष्ट्रवाद' की संज्ञा से संज्ञायित होता है।

'भारतीय राष्ट्रवाद' पाश्चात्य धरा पर प्रसूत 'राष्ट्रवाद' (जिसे 'भारतीय राष्ट्रवाद से इतर प्रत्यय इंगित करने हेतु 'पाश्चात्य राष्ट्रवाद' कह सकते हैं) का 'भारतीय संस्करण' नहीं है, अपितु यह सात्त्विकता, पावनता, दैवीयता, और कल्याणशीलता, द-कारशीलता एवम् सकारात्मक रचनाधर्मिता आदि की ज्ञान-प्रदायिनि, शान्ति-प्रदायिनि देवी भारती के गुणों से सम्पृक्त 'भारतीय' जन का राष्ट्रीय आचार है। देवी भारती के गुणों (भारतीत्व) से सम्पृक्त होने के कारण 'भारतीय राष्ट्रवाद' नितान्त सात्त्विक, पावन, सर्वकल्याणक एवं द-कारशील है। 'भारतीय राष्ट्रवाद'

रचनाधर्मी विचारों वाले 'सतत भा + रत (ज्ञान-निरत)' भारत की 'भारती+य+ता' को मुखर करने वाले भारतीय जन का नित-प्रति का करणीय सांस्कृतिक राष्ट्र-धर्म है। भारत में 'राष्ट्रवाद' इसी अर्थ में ग्राह्य रहा है। विभ्रम तब उत्पन्न होता है जब हम राष्ट्रवाद के विषय में भारतीय मनीषा से इतर पश्चिमोन्मुखी हो जाते हैं।

और, 'भारतीय राष्ट्रवाद' का 'राष्ट्र' प्लेटो-प्रणीत जातीय संस्कृति के आधार पर गठित छोटे-बड़े यूरोपीय 'नेशन स्टेट' का अर्थवाची या कि छोटे-बड़े यूरोपीय व्यापारिक-सांस्कृतिक केन्द्र वाले 'सिटी नेशन' का अर्थवाची भी नहीं है। वस्तुतः 'राष्ट्र' ऋक् युग से एक विशिष्ट इयत्ता, एक विशिष्ट बोध-सत्ता के रूप में विद्यमान रहा है आभारत और भारत 'सं वो मनांसि' रूप-स्वरूप वाले 'भारत राष्ट्र' के रूप में सर्वस्वीकार्य भी रहा है प्रागैतिहासिक (ऋक्) युग से ही। दूसरी ओर, पश्चिमी गोलार्द्ध में प्लेटो के युग से लेकर अद्यतन अर्नेस्ट रेनन की कृति 'ह्वाट इज नेशन' (अँग्रेजी अनुवाद) तक राष्ट्रवादी विमर्श उपलब्ध हैं अवश्य, परन्तु भारत में राष्ट्र और राष्ट्रवाद की अवधारणा पश्चिम के राष्ट्रवाद (पाश्चात्य राष्ट्रवाद) सम्बन्धी विन्यास-परास से सर्वथा भिन्न है।

और, 'भारतीय राष्ट्रवाद' का 'वाद' भी हीगल के 'थीसिस-एण्टीथीसिस-सिन्थेसिस' वाला वाद नहीं है। यह 'वाद' न्यायशास्त्रीय वितण्डा-जल्प-वाद वाला वाद भी नहीं है।

और, पाश्चात्य राष्ट्रवाद के सापेक्ष भारतीय राष्ट्रवाद की प्रकृति-प्रवृत्ति में मौलिक अन्तर है। 'भारतीय राष्ट्रवाद' सदा से ही प्रकृति-प्रवृत्ति में नितान्त सात्त्विक, अहिंसक, शान्तिकामी, 'सह-अस्तित्व' और 'सर्वेभन्तु सुखिनः....' सदृश सर्वकल्याणक राष्ट्रवादिता का संवाहक रहा है।

और, आधुनिक युग में हिटलर, मुसोलिनी के फासीवादी राष्ट्रवाद से भी भिन्न रहा है हमारे यहाँ के राष्ट्रवाद (भारतीय राष्ट्रवाद) का विन्यास।

और, भारतीय राष्ट्रवाद में किसी अन्य राष्ट्र, देश, समाज, समुदाय, संस्कृति, मजहब, धर्म आदि के प्रति विद्वेष या कि उसे विजित करने या मूलोच्छेदन करने की आकांक्षा कभी समाहित नहीं रही जबकि इतिहास साक्षी है कि इंग्लैण्ड ने अपने राष्ट्रवाद के नाम पर ही आयरलैण्ड पर आक्रमण कर उसे गड़प भी कर लिया।

दूसरी ओर, 'पाश्चात्य राष्ट्रवाद' व्युत्पत्ति-काल के फलक पर ही नहीं, अपितु कारक, प्रकृति, प्रवृत्ति आदि के फलकों पर भी 'भारतीय राष्ट्रवाद' से नितान्त भिन्न है। वास्तव में पाश्चात्य राष्ट्रवाद 'भारतीत्व' से अभावित होने के कारण भारतेतर जगत् में प्रायः 'पर देशी' के विरोध के कारक-कारण से जनित होता रहा है, जो निज के परदेशी-शोषण, उत्पीड़न आदि के विरोध से जनित होने के बाद कालान्तर में 'स्वराष्ट्र के शक्ति-संघनन' के नाम पर उपनिवेशवाद, औपनिवेशिक देशों के आर्थिक दोहन, शोषण, उत्पीड़न हिंसा, नस्ल-भेद, नस्लीय उन्मूलन (Genocide), साम्राज्यवाद आदि-इत्यादि परासों तक परासित होता रहा है। यूरोप के जर्मनी, इटली में वहाँ के राष्ट्रवाद का वीभत्स, घृणास्पद और हिंसक नस्लवादी रूप पूर्वकाल में प्रत्यक्ष भी हो चुका है।

राष्ट्रवाद की विवेचना-क्रम में शब्द 'राष्ट्रीय' का विन्यास देखें -

अभिधा में 'राष्ट्रीय' का अर्थ है 'राष्ट्र से सम्बन्धित'। 'राष्ट्र' चूँकि जन-संकुल का निवासस्थान होता है और निवासीजन में अनेक कुरीतियाँ स्थानिक स्तर पर हो सकती हैं लेकिन राष्ट्रीय गुणगान में हम कुरीतियों को संयोजित नहीं कर सकते हैं। तथैव, व्यंजना में 'राष्ट्र की अस्मिता से सम्बन्धित', लक्षणा में 'राष्ट्र की गरिमा से लगाव/ममत्व' वाले अर्थवाचन से 'राष्ट्रीय' का अर्थविन्यास सटीक स्वरूप में जाना जा सकता है। 'राष्ट्रीय' शब्द में भाववाचक प्रत्यय 'ता' संयुजित करके 'राष्ट्रीयता' का भाव अर्थायित होता है। इस तरह 'राष्ट्रीय अस्मिता से लगाव/ममत्व' का भावबोध ही 'राष्ट्रीयता' है। 'राष्ट्रवाद' के सहज अर्थायन के लिए 'राष्ट्रवाद को संक्षेपतः 'राष्ट्रीयता का वाद' समझा जा सकता है। राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में यहाँ उल्लेख्य है कि 'निवासीयता' को 'राष्ट्रीयता' का परिचायक नहीं माना

जाना चाहिए, इसलिए कि राष्ट्र का प्रत्येक निवासी राष्ट्रवादी भी हो यह आवश्यक होने पर भी सत्य नहीं भी हो सकता है।

और, राष्ट्रवादी भाव किसी क्षण-विशेष, अवसर-विशेष के लिए या कि विदेशी-आक्रमण के समय पर या कि विदेशी/परदेशी के विरोध के लिए उपयोगी हैं और शेष समय के लिए निरुपयोगी -- ऐसा मानना तर्कसंगत नहीं है; अपितु, आत्मघाती सिद्ध हो सकती है ऐसी अवधारणा। राष्ट्र की सर्वतोभावेन चिरकालीन उन्नति, समृद्धि, आत्मनिर्भरता आदि तभी फलित हो सकते हैं, जब राष्ट्र के प्रत्येक राष्ट्रिक में राष्ट्रवाद निरन्तर जाज्वल्यमान रहे। इतिहास साक्षी है कि 'सोने की चिड़िया' कहलाने वाले ऐश्वर्य-सम्पन्न प्राचीन भारत में आज से ११०० वर्ष पूर्व तक (११वीं शती के प्रथमार्ध तक या कि राजा भोज के शासनकाल तक) उपरि इंगित राष्ट्रीय भाव भरपूर मुखर थे। तब तक राष्ट्र, राष्ट्रीयता और राष्ट्र-कल्याण की हमारी दृष्टि धुँधलाई नहीं थी। पाश्चात्य आर्थिक इतिहासकार एंगस मेडिसन की कृति 'वैश्विक अर्थव्यवस्था: एक सहस्त्राब्दि' के अनुसार ग्यारहवीं शती ई॰ (भारत में मुस्लिम राज स्थापित होने के पूर्व) में वैश्विक उत्पादन में भारत का योगदान २८.९ प्रतिशत था; जबकि अँग्रेजी राज स्थापित होने के समय यह योगदान २४.४ प्रतिशत तक आ गया था। बाद के वर्षों के दासताकाल में यह घटाव निरन्तर बढ़ता रहा। २८.९ प्रतिशत वैश्विक अर्थव्यवस्था पर कब्जे का अर्थ है कि तत्कालीन भारत बहुविध उन्नत था। अनावश्यक नहीं यह कहना कि प्रसंगित उन्नति आभारत भारतीयों के 'भा + रत' रहने और भारतीय जनमानस में भारतीयतावादी राष्ट्रीयतावादी भावनाओं के व्याप्त होने के कारण कारित हुई थी। दूसरी ओर, ११वीं-१२वीं शताब्दी से सामाजिक-सांस्कृतिक पतन के कालखण्ड में चक्रवर्तित्व परम्परा क्षीण हो जाने पर (विशेषकर हर्षवर्द्धन के पश्चात्) 'चक्रवर्ती सम्राटत्व' के विलुप्त हो जाने के देशकाल में 'हमारे अपने' भारतीय राष्ट्रवाद से विमुख हो गए। प्रत्युत भारतीय राष्ट्रवाद को तिलांजलि देकर 'जयचन्द' जैसे राजा विदेशी आक्रमणकारियों को भारत पर आक्रमण का न्यौता भेजने लगे। तब विदेशी दासता अवश्यंभावी होनी ही थी। महमूद गजनवी यहाँ से केवल धन लूट कर ले गया था; लेकिन मुहम्मद गोरी ने हमारे अपनों की राष्ट्रवाद-विमुखता को पहचाना और उसका लाभ उठाया। यही इतिहास पुनः प्रत्यक्ष हुआ मीरजाफर, मीरकासिम, सिंधिया मानसिंह के युग में। राष्ट्रवाद-हीनता का लाभ उठा कर ही अँग्रेजों ने बंगाल, अवध, मध्य प्रदेश, रुहेलखण्ड, उड़ीसा, बिहार, पंजाब, असम, कर्नाटक और फिर कालान्तर में प्रायः सम्पूर्ण भारत में अपना राज जमा लिया और, जब हमारा राष्ट्रवाद पुनः वाचाल हुआ, तो सात समुन्दर पर राज करने वाले यूरोपियों को भी भागना पड़ा यहाँ से।

और, भारतीय राष्ट्रवाद मूलतया आविश्व प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद के समय से आर्विभूत है। आविश्व प्राचीनतम ग्रंथ 'ऋग्वेद' में 'राष्ट्र' शब्द विभिन्न विभक्तियों में अनेकशः प्रयुक्त है। ऋग्वेद में एक ऋचा में स्पष्ट रूप से कहा गया कि – "मातृभूमि, मातृभाषा और स्वसंस्कृति से प्रेम करना धर्म है।" क्या यह 'धर्म' राष्ट्रवाद नहीं है? क्या ऐसे श्लोक/ऋचा भारतीयों के 'राष्ट्र' और 'राष्ट्रवाद' से अति-अति-अति प्राचीनकाल से परिचित होने की घोषणा नहीं करते हैं ? तदेव, 'भारतीय राष्ट्रवाद' को बहुत-बहुत-बहुत बाद के कालखण्ड में जनित पाश्चात्य राष्ट्रवाद से उत्पन्न या व्युत्पन्न नहीं माना जा सकता।

तथ्यतः हमारे प्राचीन वाङ्मय में अनेकशः राष्ट्रवादी निदेशन निदेशित हैं। यथा -

- 'अहम् राष्ट्री संगमनी चिकितुषी वसूनाम्', 'मम् द्वितां राष्ट्रं क्षत्रियस्य राज्ञा राष्ट्राणाम् (ऋग्वेद), 'राष्ट्राय वर्धय' , 'वयं राष्ट्रे जाग्रयाम् पुरोहितः ....' (अथर्ववेद) प्रभृति वैदिक निदेशन उपलब्ध हैं।
- आदि-महाकवि वाल्मीकि द्वारा विरचित 'रामायणम्' में 'नगराणि च राष्ट्राणि....' , '...स्वराष्ट्ररंजनं....', 'देशधर्मस्तु पूज्यताम् ...' , 'राष्ट्राणि च विशालानि', 'पृथ्वीमिव विस्तीर्णा सराष्ट्र गृहशालिनीम्....' आदि निदेशित हैं।
- वाजसनेयी संहिता में 'राष्ट्रे राजन्यः इषव्यः शूरा', शुक्रनीति 'पादौ दुर्गः राष्ट्रौ' निदेशित है।

- तैत्तिरीयोपनिषद् में कहा गया है -- 'एते वै राष्ट्रस्य प्रदाता'।
- हमारे यहाँ 'राष्ट्रम्', 'राष्ट्रिय', 'श्रुते राष्ट्रीय मुखात' (शकुन्तला नाटक), राष्ट्रीय आदि शब्द भी विभिन्न ग्रंथों में प्रचुरता से प्रयुक्त हैं।
'राष्ट्रिय' को 'मृच्छकटिकम्' में 'शासक' अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। इस अर्थ में इतस्ततः 'राष्ट्रपति' भी प्रयुक्त है। 'राष्ट्रम्' की व्युत्पत्ति 'राज + ष्ट्रन' के रूप में व्याख्यायित है जिसका अर्थ 'राज्य', 'देश', 'साम्राज्य' अर्थायित किया गया है। तदपि बहुसंख्यक अभिमत राष्ट्र और राज्य को दो अलग-अलग इयत्ताएँ मानते रहे हैं यहाँ।
- 'कौटिल्य के अर्थशास्त्र', 'महावस्तु अवदान', 'ललितविस्तर', 'याज्ञवल्क्यस्मृति', 'मनुस्मृति', 'गौतमसूत्र', 'विष्णुधर्मसूत्र', 'अग्निपुराण', 'कामन्दक', 'मत्स्यपुराण', 'दिव्यावदान' आदि के राष्ट्र-सम्बन्धी नीतिवाक्यों को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता आलोच्य सन्दर्भों में।
- ५०० ई॰पू॰ के 'जैन ग्रन्थ' और अगुत्तर निकाय जैसे बौद्ध ग्रंथों में भी 'महाजनपद' और वज्जिसंघ सदृश राज्य-संघ वर्णित हैं। तत्कालीन देशकाल में भारतीय राष्ट्रवाद को प्रखर रूप में देखा जा सकता है।
और तथ्यतः यह भी कि कौटिल्य के अर्थशास्त्र और यहाँ के अन्यान्य ग्रंथों के अनुसार राज्य के सात अंग हैं- १. स्वामी, २. सेना, ३. दण्ड, ४. कोश, ५. दुर्ग, ६. अमात्य ७. जनपद/राष्ट्र। 'अमरकोश' के अनुसार राष्ट्र, देश, विषय, जनपद समान अर्थ वाले पर्यायवाची (राष्ट्र = देश = विषय = जनपद) हैं। अग्निपुराण, कामन्दक आदि ग्रंथों में राष्ट्र को सर्वोपरि बताया गया। ऋग्वैदिक जनपद वाले राज्य भी 'राष्ट्र' और 'राष्ट्रत्व' को वरीयता से मान देते थे। 'इण्डियन एण्टीक्वेरी' जिल्द ८, पृ॰ २०और 'एपिग्रेफिया इण्डिका' जि॰ १ पृ॰ ५ एवं 'हिरहडगल्ली दानपत्र' के अनुसार 'विषय' (अमरकोश में राष्ट्र के लिए पर्यायित) से बड़ा क्षेत्र है राष्ट्र। मनुस्मृति ७/१०९, १०/६१आदि के अनुसार भी 'राष्ट्र' सर्वांगसम है प्रदेश, देश, मण्डल का।
और, भारतीय राष्ट्रवाद में 'ला इतात एस्त स म्वाह (मैं ही राष्ट्र हूँ)' जैसा राजा लुई चौदहवें का अहम्वादी 'राष्ट्र-निकष' कभी नहीं रहा। हमारे पौराणिक आख्यानों के अनुसार विष्णु के मानसपुत्र विरजा की पाँचवीं पीढ़ी में उत्पन्न पृथु द्वारा जब जन-रक्षण की शपथ लेने के पश्चात् 'स्वयं को लोक-कल्याण के लिए पूर्णतया समर्पित' कर दिया गया (स पार्थान्य जुहोतिः), तब उसे 'राष्ट्रमभवत्' कहा गया। ध्यातव्य है कि महाराज पृथु द्वारा राजा लुई चौदहवें के समान स्वयं अपने द्वारा अपने लिए 'ला इतात एस्त स म्वाह' नहीं कहा गया, बल्कि उसे राष्ट्रहिताय शपथ चरितार्थ करने पर तत्कालीन देश-काल के बौद्धिकों द्वारा 'स पार्थान्य जुहोतिः' के आधार पर 'राष्ट्रमभवत्' ('राष्ट्रम् अभवत्') कहा गया।

राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियाँ विद्यमान हैं। यथा-
* कतिपय विद्वान् (जो भारतीय वाङ्मय से परिचित नहीं या कदाशयतः उसे नकारना चाहते हैं) मानते हैं कि शब्द 'राष्ट्र' पश्चिमी गोलार्द्ध का अवदान है और 'राष्ट्रवाद' अधुनातन पश्चिमी प्रत्यय है।
उपर्युक्त विषय में तत्त्वाभिनिवेशी विवेचन करें तो अवगत होगा कि पश्चिमी क्षितिज पर १८८४ई॰ में स्पेनिश डिक्शनरी में प्रथम बार प्रकाशित हुआ था अवश्य राष्ट्रार्थी शब्द 'Nation' का अर्थवाचन, लेकिन उससे बहुत-बहुत पूर्व का भारतीय इतिहास है 'राष्ट्र' शब्द का।
* कुछ विद्वान् प्रखर पाश्चात्य राष्ट्रवादी विचारक जोसेफ मेजिनी को श्रेय देते हैं 'राष्ट्रवाद' का।
यह तथ्य भी पूर्णतया गलत है। इस विषय में मेजिनी को श्रेय इस बात के लिए अवश्य दिया जा सकता है कि पश्चिमी गोलार्द्ध में उसने राष्ट्रवाद की महत्ता को बलशाली ढंग से स्थापित किया। जोसेफ मेजिनी के अनुसार राष्ट्र एक ऐसा ध्येय है जो बन्धुत्व के रूप में एकात्म मानवता के समान लक्ष्य का परिपूरक है; राष्ट्र के निवासियों के

जीवन का एक विशेष उद्देश्य (अर्थात् राष्ट्रवाद) होना चाहिए; यह उद्देश्य ही 'राष्ट्रीयता' का निर्माण करता है। ऐसे प्रकथन अवश्य पाश्चात्य जगत् में प्रथम बार प्रस्तुत किए थे मेजिनी ने।

* नेशन/नेशनेलिज्म से विश्व का परिचय स्पेनिश डिक्शनरी के माध्यम से या कि जोसेफ मेजिनी, बिस्मार्क या हीगल के माध्यम से ही हुआ।

ऐसे प्रकथनों को भी सत्य नहीं माना जा सकता। तथ्यतः प्लेटो के 'द रिपब्लिक' में 'सिटी नेशन' को रेखायित किया गया है। प्लेटो ने ही प्रथम बार पश्चिमी गोलार्ध में जर्मन, फ्रेंच, ग्रीक, रोमन आदि विशिष्ट जातीय सांस्कृतिक पहचान और जातीय चित्तवृत्ति के आधार पर विभिन्न राष्ट्र-राज्य (Nation-State) को रूपायित किया था।

* हान्स कॉन (Hans Kahns) जैसे विचारकों एवं उनके अनुनायियों का यह कहना भी सत्य नहीं है कि 'राष्ट्रवाद' का आरम्भ फ्रांस की राज्यक्रान्ति से हुआ।

* यह कहना भी सत्य नहीं है कि नेपोलियन, मेजिनी, फिने, बिस्मार्क, कैबूर, या हीगेल 'राष्ट्रवाद के जनक' थे।

वास्तव में हीगेल, मेजिनी आदि को पश्चिम में 'राष्ट्रवाद का प्रस्तारक' माना जा सकता है, बस ! सच तो यह है कि भारतेतर जगत् में जर्मनी के मेजिनी ही नहीं, चीन के सुनयात्सेन भी प्रखर राष्ट्रवादी माने जाते हैं। जापानी भी सातसूमा-विद्रोह के बाद गम्भीर राष्ट्रवादी बन गए थे।

और, भारतेतर राष्ट्रों में राष्ट्रवाद पनपने के कारण भिन्न-भिन्न थे। यूरोप में मूलतया राष्ट्रत्व की अवधारणा तब पनपी जब छोटे-छोटे नगर-राज्यों में लगने वाले विभिन्न कराधान से वहाँ के व्यापारियों को कष्ट होने लगा और वे व्यापक स्तर पर व्यापार करने में कठिनाई महसूस करने लगे। तब 'सिटी नेशन (नगर-राज्य)' के स्थान पर 'नेशन स्टेट' की अवधारणा विकसित हुई थी प्लेटो-युग में। तदनुरूप ग्रीक, रोम, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मन, प्रषा, पोल, रूस आदि राज्य गठित किए गए थे। बाद के वर्षों में, राष्ट्रीयता (राष्ट्रवाद) इंग्लैण्ड में जन्मी थी रोमन-विरोध से; जबकि स्पेन में जन्मी थी गृहयुद्ध से उबरने के लिए।

चीन में राष्ट्रवाद माँचू साम्राज्य के विरुद्ध उत्पन्न जनता की गणतंत्रीय आकांक्षाओं की विजय के फलस्वरूप उभरा, उभारा गया। चीन के अन्यान्य छोटे-छोटे राज्यों की आपसी कलह से निस्तार की वांछा ने भी चीन में राष्ट्रवाद को उभरने में सहायता दी। बाक्सर-विद्रोह और अंततः विदेशियों के विरुद्ध उत्पन्न क्रोध ने राष्ट्रवादी यज्ञ में घी का दायित्व निष्पन्न किया। इस तरह विविध कारणों से चीन में एक राष्ट्र-राज्य की अवधारणा विकसित हुई।

जापान में वर्ष १८७७ के सातसूमा विद्रोह से आरम्भ हुआ था राष्ट्रवाद। अल्पतंत्रीय वर्ग के तुष्टीकरण के विरोध से पल्लवित हुआ था वहाँ राष्ट्रवाद। वर्ष १८९०में जापानी संसद 'डाइट' में राष्ट्रवाद मुख्य विचारणीय प्रश्न बन गया था। अल्पतंत्रीय वर्ग की महत्ता को समाप्त करने हेतु स्थानीय जनता ने आन्दोलन आरम्भ किया तो अ-परदेशीय सीमान्तवाद के उन्मूलन की माँग से वहाँ उग्र राष्ट्रवाद प्रसारित हुआ।

इजरायल का निर्माण जर्मनी के यहूदी द्वेष के कारण और फिलिस्तीन का निर्माण इजरायल के विरोध में उस क्षेत्र के निवासियों द्वारा गृहकलह के आधार पर किया गया है। जर्मनी को पूर्वी और पश्चिमी प्रखण्डों बाँटने के पश्चात् हाल ही में पुनः एकीकृत करके निर्मित किया गया है। सोवियत संघ के विघटन से बने १७ देशों का निर्माण, उत्तर कोरिया, दक्षिण कोरिया, चेक और स्लोवाक आदि का निर्माण इसी प्रकार के उदाहरण हैं।

विदित हो कि 'राष्ट्रवाद क्या' की तलाश में इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र आदि को खँगालें तो उनके सम्मा-पाठ से स्पष्ट होगा कि वर्तमान में राष्ट्रवाद के जो अर्थ अर्थायित हैं-- उन अर्थों में भारत से सापेक्षतया बहुत बाद में और वह भी परिवर्तित रूप-स्वरूप में प्रवृत्तमान हुआ था राष्ट्रवाद पश्चिमी जगत् में। मैकियावेली-प्रणीत राष्ट्र और राष्ट्रवाद भी भारतीय अर्थों वाले 'राष्ट्रवाद' के विन्यास से विलग है।

वास्तव में पश्चिम में प्रारम्भ में 'राष्ट्रवाद' का कोई मूल्य नहीं था। इतिहास साक्षी है कि पश्चिम में राष्ट्रवाद 'पैन यूनानवाद' के माध्यम से आविर्भूत हुआ; लेकिन 'पैन यूनानवाद' का प्रयास एक नहीं अनेक बार असफल हुआ। आइसोक्रेटीज़ (४३६-४०४ ई॰ पू॰) ने प्रथम बार 'पैन हेलेनिज्म' का नारा दिया था। सिकन्दर के पिता फिलिप पहले सार्वभौम राजा हैं जो हेज़ेमोन बने थे अवश्य, लेकिन सिकन्दर से पूर्व कोई यूरोपीय सम्राट नहीं बन सका था। राजा फिलिप ने भी इस दिशा में प्रयास किया किन्तु असफल रहे थे वे भी। पैन हेलेनिस्टिक लीग की बैठक (कोरिन्थ सम्मेलन) को भी अनेक परिप्रेक्ष्यों में सफल नहीं माना गया था। पैन यूरोपियनिज्म आज भी दुष्कर है यूरोप में। जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन, चेक गणराज्य, रूस आदि के अन्तर-विरोध इतने सघन हैं कि यूरो साझा मुद्रा के बावजूद पैन यूरोपवाद (पैन यूरोपियनिज्म) आज भी अकल्पनीय है यूरोपियन क्षितिज पर। ऐसी सांस्कारिक (दुः)व्यवस्था के अद्यतन ज्वलन्त होने का ताजातरीन उदाहरण 'ब्रेक्जिट' (ग्रेट ब्रिटेन का साझा यूरोपीय बाजार से विलग होना) है।

इस्लामी जगत् में राष्ट्रवाद कम, उम्माहवाद अधिक हावी रहा है। पैन इस्लामिज्म के नाम पर कुछेक इस्लामिक देशों के संघटन 'राष्ट्रवाद' नहीं 'धर्मवाद' की भावना से संघठित होते हैं। यह धर्मवाद 'धर्म' का नहीं, वरन् 'इस्लामी उम्माह' का अवदान है। लेकिन, इस उम्माह के बावजूद ७२ फिरकों वाले इस्लाम, इन ७२फिरकों की अलग-अलग जीवन-शैली, अलग नियम-कायदे, यहाँ तक कि शिया-सुन्नी, सूफी, हनीफिया-कादरिया आदि के टकराव, शिया-सुन्नी की मस्जिद की बनावट तक में अलगाव (एक में नमाज के बाद के खुत्बा के लिए मौलाना के लिए पयम्बर, दूसरे में पयम्बर/खुत्बा आदि चलन से बाहर, शिया-सुन्नी के मद्देसहाबा बनाम तबर्रा जैसे विवाद 'पैन इस्लामिज्म' को काल्पनिक ही सिद्ध कर देते हैं। वास्तव में धर्मवाद यदि राष्ट्रवाद में सहायक होता तो पाकिस्तान का पूर्वी अंश टूट कर बांगला देश नहीं बनता; पाकिस्तान में मुहाजिर, सूफी, वहाबी, बलूची विवाद नहीं होते; टर्की, सऊदी अरब, ईराक, ईरान आदि के विवाद भी दृश्यमान नहीं होते और न ही तालिबान, अलकायदा जैसे संगठन ही उद्भूत होते। वास्तव में वे देश/समाज जो 'जीवन एक संघर्ष', 'जीवन-संघर्ष में विजय के लिए सबलतम की अभीप्सा' तथा 'मत्स्य न्याय' सदृश 'बुद्धिवाद' में विश्वास रखते हैं; जिनके सोचने-समझने का रंग-ढंग विलगाववाद या कि सामुदायिक जातीय संस्कृति के आधार पर 'सिटी नेशन' स्तर तक अलग-थलग हैं और जो कैथोलिक प्रोटेस्टेंट या ओल्ड टेस्टामेंट बनाम न्यू टेस्टामेंट के विवाद से या कि मद्देसहाबा बनाम तबर्रा जैसे विवाद से वस्तुनिष्ठतः उबर नहीं सके (सम्भवतः कभी उबर पाएँगे भी नहीं)-- उनमें एका या एकात्मकता स्थापित हो जाए, ऐसी परिकल्पना दिवास्वप्न से अधिक नहीं है। कहना होगा कि इन्हीं कारणों से 'भारतीय राष्ट्रवाद' धर्म के बजाय भारतीय संस्कृति और संस्कारों पर आधृत है। भारत में कर्मकाण्डीय अर्थों में न तो कोई एक धर्म कभी रहा, न कोई एक धर्म-पुस्तक और न ही एकमेव धर्म-पुरुष। ब्रह्म को अवतारवाद में ढालने वाली भारतीय मनीषा कर्मकाण्डीय अर्थों में एक और केवल एक धर्म की उपासक कभी नहीं रही।

इतिहासतः अब तो १२५० ई॰ के भारत का नक्शा भी लभ्य है जिसमें आज के भारत के सभी प्रदेश (अपेक्षातया विस्तृत अन्य भू-क्षेत्र) सम्मिलित हैं। मेगास्थनीज की इण्डिका, कैसियस की इण्डिका, फाह्यान, ह्वेनसांग और यू एची के यात्रा-विवरण और कल्हण की 'राजतरंगिनी' जैसे ग्रंथों में भी जिस राजनैतिक भारत का चित्रांकन है, वह वर्तमान भारत के भू-क्षेत्रों से कहीं अधिक विस्तृत है, वह भारत वस्तुतः 'सांस्कृतिक भारत' और 'संस्कारतया भारत' ही था, जिसकी आधारभूमि वस्तुतः भारत को ऋक्युग में प्रथम बार सबल राष्ट्र के रूप में सुस्थापित करने वाले राजा भरत का भरतत्व और देवी भारती से संयुतता के ब्याज से कारित पावन सात्त्विक रचनाधर्मी भारतीत्व सदृश संस्कारों के ब्याज से राष्ट्रवादी भावभूमि पर आधृत थी। तथैव, उपरि वर्णित सांस्कारिक अवस्था से संचालित देश-समाज-राष्ट्र के लोग (चाहे वे यूरोपीय, अमेरिकी हों या इस्लामी संस्कार

वाले) भारतीय राष्ट्रवाद की मूलभावना के 'क्या, क्यों' को ठीक-ठीक कैसे समझ सकते हैं ! ऐसे लोगों को तो एक 'एकात्म भारत' में कई-कई भारत दृष्टिगत होंगे ही। तथ्यतः प्राचीनकाल से ही आसेतु हिमालय कच्छ से कामरूप तक ही नहीं वृहत्तर भारत की सीमाओं तक 'एकात्म भारत' विद्यमान रहा है यहाँ, जो अद्यतन विद्यमान है। भले ही राजनैतिक छलछद्म में एक भारत ('एकात्म भारत') को विखण्डित किए जाने के प्रयास गतिमान हैं आज भी।

वस्तुतः सांस्कारिक-सांस्कृतिक भारत हमारे प्राचीन वाङ्मय में बताए गए संस्कारों पर आधृत था। ऐसे संस्कारों में 'भारतान्वय वर्धना' के संस्कार, 'राष्ट्राय वर्धय' के, 'जननीजन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' एवं 'स्वराष्ट्ररंजनम्' , 'माताः भूमिः पुत्रोऽहंपृथिव्याः' के संस्कार आदि - ऐसे संस्कारों से उद्भूत कर्त्तव्यभाव से विनिर्मित हुआ था प्राचीन सांस्कारिक-सांस्कृतिक भारत और ऐसे भारत का भारतीय राष्ट्रवाद। इसी राष्ट्रवाद के सम्बल से निज धर्म-संस्कृति की क्षति के युग में प्रश्नगत क्षति के विरोध और उसमें विफल होने की अवस्था में विदेशी आक्रान्ताओं के विरोध हेतु कसमसाता रहा भारतीय जन-मन। परन्तु अपरिहार्य कारणों से छिटपुट विरोध करने के बावजूद वे एकसूत्र-बद्ध नहीं हो सके। इसी बीच यूरोपीय शासक हावी हो गए तो हिन्दू-मुस्लिम सभी विदेशी-विरोध के लिए १९वीं शती में एकजुट होने लगे। ऐसी दशा में सक्षम नेतृत्व प्राप्त होते ही भारतीय जन-मन में पैठी राष्ट्रीय भावना पुनः पल्लवित हो उठी। परिणाम प्रत्यक्ष है कि १५ अगस्त १९४७ को लाल किले से यूनियन जैक को तिरोहित करके भारतीय तिरंगा लहराने लगा।

विचारणीय है कि भारतीय संविधान की निर्मात्री संविधान सभा ने २२ जून १९४७ को जो संकल्प पारित किया, उसमें भारत को एक प्राचीन भूमि कहा गया। यह सोचना गलत होगा कि संविधान सभा के इस संकल्प में इंगित प्राचीनता का तात्पर्य जिस भूमि से संयुजित है, उस भूमि की अपनी कोई सुदृढ़ प्राचीन संस्कृति नहीं रही होगी। तथ्यतः राष्ट्र के सुदृढ़ सांस्कृतिक आधार होने के सम्बल से ही हमारे भारत के काव्य और दर्शन में राष्ट्रवाद एक मूल्य है, एक जीवनाचरण है, जो कतिपय कर्त्तव्यनिष्ठा एक राष्ट्र एवं राष्ट्रधर्म का अनुषंग है। इसीलिए हमारा राष्ट्र भारत एक मृण्मय भूखण्ड मात्र नहीं, अपितु यह एक शाश्वत् सांस्कारिक, सांस्कृतिक सत्ता वाला राष्ट्र है। तथैव, प्रख्यात चिन्तक, वर्तमान में उ॰ प्र॰ विधानसभाध्यक्ष मा॰ हृदयनारायण दीक्षित के शब्द 'हमारा राष्ट्र एक भू-सांस्कृतिक अवधारणा है और राष्ट्रवाद को उसी से संपृक्त वाद' के रूप में स्वीकार्य मानना ही उचित है। श्री दीक्षित के अनुसार भूमि और संस्कृति का आग्रही भाव 'राष्ट्रीयता (राष्ट्रवाद)' है। ऐसे भाव भारतीय राष्ट्रवाद के मूल तत्त्वों को आत्मसात् करने में सहायक रहे हैं।

विदित हो कि भौगोलिक स्वरूप में राष्ट्र और राज्य समरूपी हैं। एक राज्य का एक राष्ट्र, एक राष्ट्र का एक राज्य। इस अर्थ-विशेष में राष्ट्रवाद एक नवीन यूरोपीय अवधारणा है। परन्तु इतिहास साक्षी है कि विविधता में एकता वाले भारत में प्राचीनकाल में अनेक राज्य होने के बावजूद एक राष्ट्र सदैव अस्तित्वमान रहा है। तथैव, मा॰ हृदयनारायण दीक्षित का यह कथन भी सर्वथा ठीक माना जाएगा कि – "यहाँ अँग्रेज आए, अँग्रेजी राज्य हुआ। राज्य अँग्रेजी था मगर राष्ट्र सनातन। तुर्क आए, राज्य इस्लामी था मगर राष्ट्र हिन्दू। अनेक अवसरों पर भारत छोटे-छोटे राज्यों में भिन्न-भिन्न किस्म की राज्य-व्यवस्थाओं में बँटा रहा, मगर राष्ट्र के जीवन-निकष सनातन ही रहे।"

राष्ट्रवाद-सम्बन्धी कतिपय भारतीय एवं भारतीयेतर अभिमत भी देखें -

॰ राष्ट्रचेता महर्षि अरविन्द राष्ट्रवाद को सनातन धर्म की तरह उपयोगी और आवश्यक बताते थे। प्रतीततः महर्षि अरविन्द जिस धर्म की बात करते हैं, वह धर्म तत्त्वतः 'धृतिः क्षमादमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रयनिग्रहः, धीः विद्या सत्यमऽक्रोधो दशकम् धर्मलक्षणम्' वाले धर्म से या कि 'यतो अभ्युदय निःश्रेयस सिद्धि स धर्मः' वाले धर्म से इतर नहीं है। ऐसा धर्म यदि राष्ट्रीय धर्म मान लिया जाए तो जो मनस्विता राष्ट्रिकों में कारित होगी उससे 'राष्ट्रवाद' की अनेक अपेक्षाएँ स्वतः पूर्त्त हो जाएँगी।

◦ राष्ट्रवादी वी◦ डी◦ सावरकर तो श्री नेहरू से आगे बढ़ कर मानते थे कि केवल एक जगह रहने से राष्ट्र/राष्ट्रीयता का निर्माण नहीं होता है। श्री सावरकर के अनुसार धर्म-संस्कृति की महती भूमिका होती है किसी देश को राष्ट्र बनाने में।

◦ जहाँ तक राष्ट्रवाद के 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आर◦एस◦एस◦) मॉडल' का प्रक्षेत्र है, इन पंक्तियों के लेखक की दृष्टि से राष्ट्रवाद को केवल राष्ट्रधर्म से उद्भूत और वहीं तक विन्यसित माना जाना चाहिए। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कतिपय कार्यकलापों से असहमति व्यक्त की जा सकती है और उसके कृत्य जो राष्ट्रधर्म के बजाय क्षुद्र राजनीतिक स्वार्थ या कि 'फूट डालो, राज करो' जैसी कुनीति के अंतर्गत जातिभेद, वर्णभेद, धर्मभेद को बढ़ावा देने वाले हैं (यदि कोई हैं तो), उनकी उस सीमा तक कदर्थना की जानी चाहिए। तदपि, आर◦एस◦एस◦ के नाम पर कितना ही नाक-भौं चढ़ाई जाए, इस संघ की प्रत्यक्ष राष्ट्रवादिता को नकारा नहीं जा सकता। अतएव, अन्यान्य असहमतियों के बावजूद संघ-प्रमुख गोलवलकर की कृति 'वी आर अवर नेशनहुड डिफाइन्ड' को और/या श्री वी◦ डी◦ सावरकर की मराठी कृति 'राष्ट्र-मीमांसा' सदृश कृतियों को राष्ट्रवाद के सम्यक् विमर्श में विचारित करना ही होगा। संघप्रमुख-प्रणीत कृति के अनुसार भौगोलिक, नस्ली, धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषायी ५ लक्षण होते हैं जिनसे राष्ट्र परिभाषित होता है। गोलवलकर स्वयं स्वीकार करते हैं कि प्राचीन धर्मग्रन्थों में धर्म-संस्कृति व भाषा का जिक्र स्वतंत्र रूप में नहीं है परन्तु उनके अनुसार राष्ट्र-संघटक जनपद में ये तत्त्व शामिल हैं।

◦ प्रख्यात पत्रकार पंकज विष्ट द्वारा संपादित 'हम भारत के लोग' में संगृहीत लेख में विचारक लेखक महेश दर्पण ने 'Country' शब्द से 'Countera' के अंतःसम्बन्धों के आधार पर माना है कि 'Country' सांस्कृतिक राष्ट्र और भौगोलिक देश का समन्वित चित्र प्रस्तुत करता है। इस विवेचना के आधार पर कह सकते हैं कि 'Countera' में एक संकेन्द्रण बिन्दु होना अवश्यंभावी है। तथैव, राष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में यह बिन्दु 'राष्ट्रवाद' है।

◦ हिन्दी विद्वान् डॉ◦ रामविलास शर्मा के अनुसार लैटिन शब्द 'Patria', 'राष्ट्र' का अर्थवाची है, राष्ट्र-राज्य (Nation State) नहीं। 'Patria' से ही बना है 'Patriot' अर्थात् राष्ट्रभक्त अर्थात् 'राष्ट्रवादी'।

◦ पाश्चात्य विचारक हीगल ने राष्ट्र को आध्यात्मिक इकाई बताया है।

◦ पाश्चात्य राजनीतिशास्त्री जे◦ एच◦ रोज का मानना था कि - 'राष्ट्रवाद' हृदयों की ऐसी एकता है जो एक बार बन कर नहीं टूटती।"

◦ इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार 'राष्ट्रवाद' एक ऐसी मनोदशा है जिसमें व्यक्ति अपने राष्ट्र-राज्य के प्रति उच्चतर भक्ति-भावना का अनुभव करता है।

◦ फ्रेंच लेखक अर्नैस्ट रेनन की कृति (अँग्रेजी अनुवाद : 'व्हाट इज नेशन') में राष्ट्रवाद से सम्बंधित अनेक विषयों की सविस्तार विवेचना की गई है। श्री रेनन के अनुसार—"राष्ट्र एक आध्यात्मिक सिद्धान्त है। इतिहास की जटिलताओं का हासिल, न कि धरा पर एकजुट हुए जमावड़ों का सिलसिला।"+++ "राष्ट्र की तामीर के लिए एक भाषा, एक धर्म या एक आर्थिक हितों वाला समुदाय जरूरी नहीं, जरूरी एक विचार, सच्चा भाव और मूल्य होना चाहिए।"

◦ जान स्टुअर्ट मिल 'राष्ट्रवाद' का विकास समान ऐतिहासिक परम्पराओं से मानते हैं।

◦ रैम्जे म्योर 'राष्ट्रवाद' को भाषाई एकता से बलशील होना स्वीकारते हैं।

◦ प्रख्यात चीनी राष्ट्रवादी राष्ट्रपति सुनयात सेन का मानना था - "राष्ट्रवाद केवल एक नकारात्मक अवधारणा नहीं, अपितु यह देशवासियों को सकारात्मक मूल्यों के लिए संगठित करने वाली शक्ति भी बन सकती है।"

उपर्युक्तानुसार 'राष्ट्रवाद' औपनिवेशिक लूट-खसोट का विरोध या कि विदेशी सत्ता का विरोध मात्र तक सीमित नहीं है वरन् वह राष्ट्रवासियों की राष्ट्र के प्रति एक सकारात्मक आचारगत उद्भावना है।

रामायण-काल के पूर्व से भारत में पदनाम : महाराजा, सम्राट, चक्रवर्ती प्रचलन में था। अश्वमेध के माध्यम से अपने सम्राटत्व को प्रकट करने वाले महाराज सगर, दिलीप, अज, दशरथ, राम से लेकर हस्तिनापुर

सम्राट युधिष्ठिर तक सभी सम्राट ही थे। महाराज धृतराष्ट्र के तो नाम में ही राष्ट्र शब्द समाहित था। सम्राटत्व की यह परम्परा उपलब्ध भारतीय इतिहास में अशोक, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य और हर्षवर्द्धन तक विस्तीर्ण रही है। सम्राटत्व में क्या 'सम्' अव्यय के साथ राष्ट्रत्व समाहित नहीं है ? भूगोल, भाषा, संस्कृति और सांस्कृतिक सम-मनस्कता जैसे तत्त्वों से भी राष्ट्रवादी संस्कार पल्लवित हुआ था भारत में।

एक राष्ट्र में अनेक राज्य हो सकते हैं। स्वयंसंप्रभु छोटे-बड़े स्वशासी राज्य-राष्ट्र तो आज भी विद्यमान है। संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत संघ आदि में छोटे-छोटे राज्य एक राष्ट्र के अधीनस्थ हैं। तो क्या वहाँ राष्ट्रवाद अनुपस्थित माना जा सकता है? इस तरह अनेक स्वशासी राज्यों के विद्यमान रहने के बावजूद यह मानना तर्कोचित नहीं कि भारत प्राचीनकाल में एक राष्ट्र नहीं था या यहाँ राष्ट्रवाद कभी अनुपस्थित था। वास्तव में 'चक्रवर्तिता' उपनिवेशवादी व्यवस्था नहीं थी। यह अधीनस्थ राजा द्वारा सम्राट/महाराजा की आधीनता को स्वीकारने और उसे प्रतीकात्मक उपहार देने तथा बदले में पूर्ण संरक्षा, सुरक्षा प्राप्त करने की व्यवस्था थी जिसमें छोटे-बड़े राज्य/राजागण सम्राट और चक्रवर्ती सम्राट द्वारा नियंत्रित किए गए जाते थे जिसे एक राष्ट्रत्व से विच्छिन्न नहीं माना जा सकता। सांस्कृतिक भावानुभाव भी भारत को राष्ट्रत्व और राष्ट्रवाद से आमण्डित करते थे। जबकि विविधता में एकता वाली भारतीय संस्कृति में राष्ट्रत्व पर देश में विद्यमान अनेकानेक संस्कृति-समाज वाले विविध राज्य के होने से कोई आक्षेप नहीं पड़ता था।

प्रकटतः राष्ट्र-राज्य बनाम राष्ट्र (Nation State Vs Nation) का भेद औपनिवेशिक युग से पल्लवित हुआ। पाश्चात्य विचारक वाकर कोन्नार के अनुसार 'राष्ट्र-राज्य (Nation State)' की अवधारणा अमेरिका से आयातित है। यूरोप में एक राज्य में बसने वाले दूसरी जाति के लोग अपनी सांस्कृतिक पहचान के लिए आन्दोलित रहते थे। ऐसे में वहाँ जातीय पहचान पर आधृत 'राष्ट्र-राज्य' का विचार पनप जाना आश्चर्य की विषयवस्तु नहीं है।

दूसरी ओर, भारत में प्राचीनकाल से अद्यतन जातियों की अस्मितावादी राज्य की अवधारणा बलीकृत नहीं हो पाई। आपवादिक स्वरूप में स्वतंत्रता-आन्दोलन के पश्चात् भाषायी आधार पर राज्य-पुनर्गठन का प्रश्न हो या मराठी मानुष वाले शिवसैनिकों की नारेबाजी - ऐसे विचार भारतीय दृष्टि से कभी स्वीकार्य नहीं रहे। भाषायी आधारों पर राज्य-पुनर्गठन में भी 'जाति-राज्य' की अवधारणा कारक-कारण नहीं है।

पाश्चात्य अभिमत से 'नेशन' का अर्थ है 'पीपुल', 'सिटीजनरी'; 'स्टेट' का अर्थ है 'टेरीटरी', 'बाउन्ड्री'। इस तरह पाश्चात्य अभिमत में जातिसूचक 'सिटीजनरी', देशसूचक 'टेरीटरी' दो अलग-अलग इयत्ता/ अस्मिता की विषयवस्तु हो सकते हैं। इस तरह, पाश्चात्य अभिमत से Nation state स्वतः दो स्वतंत्र इयत्ताओं वाले शब्दों का युग्म है, जो एकार्थक (एक अर्थ वाला) प्रतीत नहीं होता। लेकिन, अद्यतन भारतीय सन्दर्भ में 'राष्ट्र-राज्य (Nation state)' का राष्ट्र (Nation) और राज्य (state) अलग-अलग अस्मिता का परिचायक है; जिनके एकत्व की धुरी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक एकत्व की उद्भावना ही है। वैदिक काल में 'अहम् राष्ट्रे संगमनी.....', 'संवदध्वं सं वो मनांसि .....' की अवधारणा से लेकर अद्यतन सप्तपुरी, सप्ततीर्थ, सप्तपावन नदियाँ और हमारे पूजापाठ का प्रथम मंत्र ('संकल्प मंत्र') हो या किसी अनुष्ठान के आवश्यक उपादान 'जल' के संदर्भ में भारत की सभी प्रमुख नदियों की स्तुति जैसे उपक्रम या वैदिक, सनातन, वैष्णव, शैव, शाक्त पूजास्थलों का आ-भारत विद्यमान होना आदि - इनमें कहीं भी जाति, क्षेत्र आदि के विभेद दृश्यमान नहीं रहे हैं।

जहाँ तक 'भारतीय राष्ट्रवाद' पर सबसे बड़े आक्षेप (कथित) 'हिन्दू राष्ट्रवाद' होने का प्रश्न है, यह सच है कि आदिकाल से भारत में आर्य जाति (जो बाद में हिन्दू जाति नाम से जानी गई) बहु-बहु-बहुसंख्यक है लेकिन विश्व की सर्वाधिक उदारमना, उदात्तमना हिन्दू जाति से भय क्यों ? मा॰ सर्वोच्च न्यायालय भी मान चुका है कि हिन्दुत्व कोई धर्म नहीं वरन् एक जीवन-शैली है। महीन कतरने वाले कथित प्रबुद्ध जन हिन्दू धर्म में वैष्णव धर्म, शैव धर्म, पाशुपत धर्म, शाक्त धर्म, गाणपत्य धर्म आदि-इत्यादि अनेक विभेद परिगणित करते हैं। किन्तु जैन धर्म,

बौद्ध धर्म, सिक्ख धर्म भी कथित हिन्दू धर्म से इतर कहाँ हैं ? वस्तुतः जिसे हिन्दू धर्म, सनातन धर्म, वैष्णव धर्म आदि कहा जा रहा है, उससे अधिक सहिष्णु धर्म विश्व के किसी भी कोने में उपलब्ध नहीं है। कैथोलिक-प्रोटेस्टैंट, शिया-सुन्नी, हनीफिया-कादरिया-सूफी-वहाबी जैसे अन्यान्य धर्म /वर्ग के संघर्षों के सापेक्ष हिन्दू धर्म में तो धर्म एवं धार्मिक मान्यताओं, रीति-रिवाजों को मानने या न मानने की पूरी छूट है। सच्चा हिन्दू वही है जो धार्मिक कट्टरता से, धर्म-विद्वेष से सर्वथा परे है और 'हीनम् दूरयति, हिंसाम् दूरयति' को साकार करता है। तब, कथित हिन्दू जाति से, हिन्दू चित्तवृत्ति से या कि हिन्दूवादी राष्ट्रवाद या कि हिन्दू राष्ट्रवाद के नाम से भयभीत होने/करने की क्या आवश्यकता है? क्या यह भयभीतीकरण भारतीय राष्ट्रवाद को, प्रकारान्तर से भारत को कमजोर करने की किसी अन्तर-राष्ट्रीय साजिश का प्रतिफलन तो नहीं है ?

कहने-सुनने के लिए 'भारतीय राष्ट्रवाद' के प्रतिपक्षी हिन्दू समाज में कथित व्याप्त वर्णभेद, जातिभेद भी उछाल सकते हैं, लेकिन सच यही है कि भारतीय राष्ट्रवाद के फलक पर जातिभेद, वर्णभेद जैसा कोई विभेद कार्यकारी या कार्यशील नहीं रहा है यहाँ कभी। इस बिन्दु पर देखा जा सकता है कि भारतीय स्वाधीनता-संग्राम में तात्या टोपे, लक्ष्मीबाई, नानाजी पेशवा सदृश उच्चवर्णी संग्राम-सेनानी थे तो झलकारीबाई, बिजली पासी, पासी राजा दर्शन सिंह और ऐसे अनगिनत निम्नवर्णी जन भी सेनानी थे जिन्होंने अपना सक्रिय योगदान दिया था स्वाधीनता-संग्राम में। इस तरह कथित जातिभेद, वर्णभेद के आरोप कतिपय राजनेताओं की राजनैतिक चालबाजी के अलावा भारतीय राष्ट्रवाद के धरातल पर तो दृश्यमान नहीं दिखता।

वास्तव में सनातनी भारतीय राष्ट्रवाद को 'हिन्दू राष्ट्रवाद' नहीं वरन् 'भारतीय राष्ट्रवाद' ही माना जा सकता है, माना जाना चाहिए भी। 'हम भारत के लोग' कृति में ख्यात समाजवादी समालोचक खगेन्द्र ठाकुर ने राष्ट्रीयता/राष्ट्रवाद में राष्ट्र के प्रति अहंकार वाले और धर्म-निरपेक्षता के बदले साम्प्रदायिक चरित्र वाले, दूसरे राष्ट्रों के प्रति नफरत का भाव भरने वाले राष्ट्रवाद को गर्हित कहा है और अपने समर्थन में १९३३ में लिखे गए प्रेमचन्द के आलेख में उल्लिखित 'राष्ट्रवाद आधुनिक काल का कोढ़ है' को उद्धृत किया है। तदपि प्रेमचन्द (जो उपरि इंगित आलेख-लेखन के समय जाने किस आवेश में राष्ट्रवाद के विषय में प्रश्नगत असत्य धारणा से आवेशित हो गए थे) कहें या खगेन्द्र ठाकुर या पीली दृष्टि वाले कतिपय वामपंथी या २ + २ = ५ कहने वाले कतिपय हिन्दू-विरोधी (जिन्हें भारत के प्राचीन बड़प्पनों को छोटा दिखाना ही अभीप्सित है, उसमें उन्हें हिन्दू के बड़प्पन की बू आती है जो उन्हें कतई नहीं सुहाती) - ऐसे सभी मतिभ्रम से आवेशित लोगों को अनसुना किया जाना राष्ट्रीय आवश्यकता है। वास्तव में सच्चा राष्ट्रवाद राष्ट्र-गौरव से आप्लावित तो होता है लेकिन उसमें अहं का भाव नहीं होता और साम्प्रदायिक चरित्र तो हो ही नहीं सकता भारतीय राष्ट्रवाद में इसलिए कि अनेक मत-मतान्तर के देश भारत की प्रकृति साम्प्रदायिक नहीं है। ब्रह्म को सर्वव्यापी मानने वाले और ब्रह्म के अवतारवाद के पोषक भारतीय जन 'सम्प्रदायवादी' कैसे हो सकते हैं। इसी तरह 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के मानने वाले भारतीयों पर विभिन्न राष्ट्रों के विरुद्ध नफरत फैलाने का आरोप विजड़ित किया ही नहीं जा सकता। ज्ञात इतिहास में अब तक ऐसा कोई दृष्टान्त उद्धृत नहीं किया जा सकता जो 'भारतीय राष्ट्रवाद' को मानवीयता के निकषों पर गर्हित सिद्ध कर सके।

एक अन्य पक्ष। दुर्योग से कतिपय कथित विद्वान् विशेषकर वामपंथी विचारक (?) अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के नाम पर 'राष्ट्रवाद' का विरोध करते हैं। भारतीयता के तो विरोधी हैं ही वे। किन्तु ऐसे राष्ट्र-विरोधी दृष्टिकोण मात्र एक व्यक्ति या एक समुदाय-विशेष के कथित विद्वान् के नहीं हैं। प्रत्युत ऐसे विरोध उन तमाम बौद्धिकों (?) की दिनौंधी के परिचायक हैं जिन्हें 'भारत', 'आर्य (शब्दान्तर से हिन्दू)', 'भारतीय संस्कृति' और 'भारतीयता' में कोई अच्छाई दिखती ही नहीं।

जहाँ तक 'नवजागरण' या तथाकथित 'आधुनिक सोच' का प्रश्न है, भारत में नवजागरण १९वीं शताब्दि में आविर्भूत बताया जाता है। संयोगात् यहाँ जीवन-मूल्यों में, जीवन-शैली में आधुनिकता की पैठ का समय भी

लगभग १९वीं शताब्दि ही है। राजा राममोहन राय, विवेकानन्द, बंकिमचन्द्र से लेकर तिलक, गाँधी तक के युगखण्ड के लिए 'नवजागरण' शब्द डॉ॰ रामविलास शर्मा द्वारा अवदानित है। इसके पूर्व इसे पुनर्जागरण, पुनरुत्थान, प्रबोधन सदृश शब्दों से अभिव्यक्त किया जाता रहा है। भारतीय नवजागरण को १५-१६ वीं शताब्दि के यूरोपीय रेनेसां (Renaissance) की देन बताया जाता है। डॉ॰ रामविलास शर्मा यूरोपीय रेनेसां को भारतीय परिप्रेक्ष्य में लोक-जागरण के समकक्ष रखते हैं। डॉ॰ नामवर सिंह के अभिमत से 'नवजागरण' यूरोपीय इनलाइटमेंट (प्रबोधन) का पर्यायवाची है जो १९वीं शती का अवदान है। इसे 'नवचेतना', 'नवीन उदित चेतना' के नाम से भी जाना जाता है। इन पंक्तियों के लेखक के विचार से 'भारतीय राष्ट्रवाद' के परिप्रेक्ष्य में 'नवीन उदित चेतना' के बजाय संदर्भगत नवजागरण को 'पुनरुत्थानवादी राष्ट्रीय चेतना' की संज्ञा दिया जाना अधिक सटीक है।

इसी अनुक्रम का सच है कि 'नवजागरण काल' आधुनिक सोच का कालखण्ड होने के साथ-साथ हिन्दी जगत् में भी महत्त्वपूर्ण 'काल' है इसलिए कि आधुनिक हिन्दी-साहित्य का नवजागरण भी इसी कालखण्ड में आविर्भूत हुआ। मध्ययुगीन हिन्दी जगत् के भक्तिकाल का और तदन्तर सामन्तवादी रीतिकाल का चोला लगभग उतार कर हिन्दी जगत् में आधुनिक सोच-समझ की चेतना के उद्भव का कालखण्ड तो है ही यह। वहीं, भाषा और साहित्य के प्रति लगाव में नए दृष्टिबोध के साथ-साथ राष्ट्रीय संचेतना के पुनरुत्थान से भी इस नवजागरणकाल में साक्षात्कार होता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हों या महावीर प्रसाद द्विवेदी, शिवपूजन सहाय, बनारसीदास चतुर्वेदी आदि अनेक हिन्दी-विद्वानों ने इसी कालखण्ड में अपनी रचनाओं में राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रचिन्ता उकेरी। राष्ट्रीय क्षितिज पर व्याप्त सामाजिक सांस्कृतिक कुरीतियों के विरोध को भी वाचाल किया गया इसी कालखण्ड में। यह अंततः हमारे स्वाधीनता संग्राम को धार देने में सहायक सिद्ध हुआ। दूसरी ओर, नवजागरण-काल में मुकुलित हुई राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द, बंकिमचन्द्र चटर्जी प्रभृति राष्ट्रचेता मनीषियों की चेतना। ये सभी राष्ट्रवाद के जाज्वल्य नक्षत्र बने और प्रखरतम राष्ट्रवादी सिद्ध हुए।

ज्ञात हो कि पत्रिका 'आजकल' (अंक: मई २०१७) में प्रकाशित हितेन्द्र पटेल के इस निष्कर्ष में बल दिखता है – "नवजागरण की धारणा के पीछे एक और बात है कि इस 'नवीन चेतना' के कारण हमने अपनी विरासत को देखना सीखा, उससे प्रेरणा ली और उस धरोहर को सँजोने के अँग्रेजी प्रयासों को आगे बढ़ाया। यह मान लिया गया है कि प्राचीन युग से आधुनिक युग तक के इतिहास को समझने में नवजागरण के कारण उत्पन्न 'आधुनिक चेतना' ने हमें मदद की। हम अतीत, वर्तमान और भविष्य के संपर्कों को ठीक से समझने लगे। इस यात्रा में अपनी भाषा, अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता और अपने देश को समझने और उसे मजबूती प्रदान करने की शक्ति और प्रेरणा हमें मिली। कह सकते हैं कि नवजागरण वास्तव में राष्ट्रवाद-पल्लवन में सहायक ही सिद्ध हुआ। तदनुसार यह आशंका स्वतः निर्मूल हो जाती है कि 'राष्ट्रवाद' पोंगापंथी या संकुचित विचारधारा का पोषक है या कि राष्ट्रवाद और आधुनिकतावादी सोच में ३६ का सम्बन्ध है।

ध्यातव्य है कि प्लेटो ने भले ही कभी विभिन्न जातीय संस्कृति के नाम पर राष्ट्रों का अलग-अलग क्षेत्रांकन किया हो, लेकिन २१वीं सदी में विश्वग्राम बन चुकी आज की दुनिया में कोई राष्ट्र/देश एक-केन्द्रिक संस्कृति/समाज का देश या राष्ट्र नहीं रह गया है। एक-केन्द्रित रह सकता भी नहीं वर्तमान आर्थिक-सामाजिक तानेबाने में। तब भी क्या विश्व के अन्यान्य देश अपनी-अपनी राष्ट्रीयता का, राष्ट्रवादिता का परित्याग कर सकते हैं ? नहीं ना ! तब, बहुकेन्द्रिक होने या भारत के समाज/संस्कृति में बहुकेन्द्रीयता होने का हुंकार भर कर यहाँ के बहु-बहु-बहुसंख्यकों की संस्कृति वाले 'भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' या कि 'भारतीय राष्ट्रवाद' को आक्षेपित क्यों किया जाता है ? संस्कृति कोई रुद्राक्ष नहीं होती जिसके एकमुखी होने पर उसका मूल्य बढ़ जाए। विशाल भू-क्षेत्र वाले भारत की संस्कृति 'विविधता में सांस्कृतिक एकता' को वाचाल करती है और यहाँ का समाज यदि एकायामी नहीं

है तो उससे 'भारतीय राष्ट्रवाद' आक्षेपित कैसे हो सकता है? इस क्रम में 'सम् मनांसि....', 'संवदध्वं, संगच्छध्वं ....' आदि के अर्थायन हेतु 'सम्' उपसर्ग का वस्तुनिष्ठ अर्थायन अभीष्ट है। 'संवदध्वं' आदि का अर्थ 'एक वदध्वं', 'एक गच्छध्वं', 'एक मनांसि' से तात्पर्यित नहीं है। उनमें 'समरैखिकता' आवश्यक है, बस। हाँ, इस क्रम में किसी अराजकता की छूट नहीं दी जा सकती।

पुनः देखें - प्लेटो ने विशिष्ट संस्कृति (विशिष्ट जातीय चित्तवृत्ति) के आधार पर मिस्र, यूनान, रोम आदि राष्ट्रों को नामित किया था। बाद में भले ही पश्चिम में 'राष्ट्र' शब्द का अर्थ बदल गया हो, लेकिन भारत अद्यतन मृण्मय राष्ट्र: जियो-पॉलिटिकल नेशन मात्र नहीं है वरन् यह मृण्मयता से आगे बढ़कर जियो-कल्चरल (भू-सांस्कृतिक) राष्ट्र है। भारतत्व (प्रकाश-निरतता) और सत्त्व की देवी भारती (सरस्वती) की सात्त्विक चिन्मयता यहाँ के जन-मन में रची-बसी हैं। यही यहाँ का मनोमय-कोश है। 'भारतीय राष्ट्रवाद' वस्तुतः इसी 'चिन्मय मनस्विता का जयकारा' है।

एक दूसरा पक्ष। भारतीय राष्ट्रवाद को 'उग्र राष्ट्रवाद' या 'हिन्दू राष्ट्रवाद' कह कर उसका रचनात्मक उपयोग न करना बौद्धिक पलायन है। नेताओं या बुद्धिजीवियों के न चाहने से राष्ट्रवाद की विशिष्ट मानसिकता (Ethos) समाप्त नहीं होगी। सांस्कृतिक जनचेतना जो भारत जैसे प्राचीन संस्कृति-धनी राष्ट्र में जन-जन की नस-नस में अभिमूलित है, उसे निर्मूल किया जाना संभव नहीं है; उपादेय भी नहीं है।

यहीं, समाजवादी चिन्तक किशन पटनायक के शब्दों को उद्धृत करना ही होगा कि "राष्ट्रवाद की भावना से हम मनुष्य को मुक्त नहीं कर सकते। औसत नागरिक अगर राष्ट्रवादी नहीं होगा तो जाति या धर्म के प्रति वफादारी उसको संकीर्णता की तरफ ले जाएगी। राष्ट्रवाद उसको जातिवाद या साम्प्रदायिकता की संकीर्णता से ऊपर उठाता है। सम्पूर्ण मानव-समाज के प्रति वफादारी भावनात्मक स्तर पर औसत नागरिक के लिए आज की दुनिया में सम्भव नहीं है। लेकिन राष्ट्रवादी भावक को मानव-कल्याण के लिए प्रेरित किया जा सकता है।"

और, यहीं, प्रासंगिक है यह बताना भी कि 'राष्ट्रवाद' स्वतः नकारात्मकता का पोषक नहीं है। प्रत्युत यह भारतीय सांस्कृतिक स्वरूप वाला 'भारतीय राष्ट्रवाद' हो या चीनी/जापानी प्रारूप वाला या मेजिनी-प्रारूपित राष्ट्रवादी अधिलक्ष्यों वाला - प्रायः सभी स्वरूपों में राष्ट्रवाद 'राष्ट्र' को सशक्त करने वाला सकारात्मक भावानुभाव है। इससे संस्कारित होने पर प्रायः सम्बन्धित राष्ट्र के पक्ष में बहुविध आशातीत प्रलाभ लभ्य हुआ है। 'राष्ट्रवाद' की सकारात्मकता का सबलतम उदाहरण है हमारा पड़ोसी शक्तिशाली देश चीन, जहाँ राष्ट्रवादी भावना के उदय के साथ ही १९११ ई॰ से चीन 'नया चीन' बन कर दिन-ब-दिन सशक्त होता गया, आज भी होता जा रहा है।

छोटे से देश जापान ने अपने सशक्त राष्ट्रवाद के बल पर ही पहले चीन, बाद में १९०४ में तत्कालीन प्रथम कोटि के विश्वशक्ति वाले देश रूस तक को परास्त किया।

नेपोलियन हो या सिकन्दर-- ऐसे नायक अपने-अपने राष्ट्र के नागरिकों में, सेना में राष्ट्रवाद को हुंकरित करने के पश्चात् ही महान् विजेता बन सके।

अधुना भारत में भी राष्ट्रवाद के सकारात्मक उपयोग के बल से ही १५अगस्त १९४७ को लालकिला पर तिरंगा फहराया जा सका। बाल लाल पाल से लेकर गाँधी तक के आन्दोलन में, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के आजाद हिन्द फौज के सैन्य अभियान में, भारतीय नेवी के विद्रोह में राष्ट्रवाद की सार्थक भूमिका को नकारा जा सकता है क्या ? पाकिस्तानी आक्रमण १९४७, १९६५, १९७१ और १९९९ या कि चीनी आक्रमण १९६२ के विरुद्ध हमारी सेना ने जो विजय प्राप्त कीं या कि १९४७ से अद्यतन हमारी सेना के जवान जिस जोश से दुर्गम सीमावर्ती क्षेत्रों में सीमान्त सुरक्षा में जुटे पड़े हैं, क्या वह राष्ट्रवाद के अभाव में सम्भव है ?

तब, हाँ तब, कथित राष्ट्रवादी राग के विरोध की हिमाकत क्यों और कैसे कर रहे हैं कथित इम्पीकेबुल क्रेडेंशियल्स।

एक पक्ष और। 'समानो मंत्रः समितिः समानी...' और 'संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि ....' सदृश ऋग्वेदीय ऋचाओं में राष्ट्रीय आसंगता दृश्यमान हैं। मैक्डूगल ने भी 'सामान्य मन (Common mind)' को समाज के

निर्माण के लिए वांछनीय बताया है। समाज से ही कालान्तर में राज्य का निर्माण हुआ और राष्ट्र का भी। राष्ट्र/देश/समाज के स्थायित्व के लिए भी 'समान मन' की आवश्यकता अन्यान्य परिप्रेक्ष्यों की अपेक्षा कहीं अधिक है। निर्विवादतः किसी समाज/देश को 'राष्ट्र' बनाने के लिए राष्ट्रिकों में 'सामान्य मन' का होना अति वांछनीय है। कोई राष्ट्र वास्तविक अर्थों में तब तक 'राष्ट्र' नहीं बन सकता, जब तक उसके राष्ट्रिकों का मनोमय-कोश राष्ट्रीय संस्कारों से समरैखिक न हो जाए।

विदित हो कि 'अहम् राष्ट्री संगमनी.....' (कहीं-कहीं 'अहम् राष्टे[a] संगमनी.....' पाठ भी मिलता है) में ऋक् वेदकार 'राष्ट्रम् संगमनी' नहीं कहते, वरन् वे 'अहम् राष्ट्री संगमनी....' कहते हैं। इसमें प्रयुक्त शब्द 'राष्ट्री है जो 'राष्ट्र से सम्बन्धित' अथवा 'राष्ट्र के साथ' के अर्थवाचक संदर्भ में प्रयुक्त है अर्थात् राष्ट्र को राष्ट्रिक (राष्ट्रवासी) के साथ संगमन नहीं करना है अपितु राष्ट्रिक को राष्ट्र के साथ राष्ट्र में संगमन करना अपेक्षित है। इस ऋक्-निर्देश के अनुसार सभी राष्ट्रिकों की मानसिकता ऐसी होनी चाहिए कि वे राष्ट्र के साथ संगमन, सहगमन कर सकें। यजुर्वेद में कहा गया है - 'विद्यात् सूत्रं वितते यास्मिन्नोताः प्रज्ञा इमा।' ऐसी विद्या जो राष्ट्र को एक सूत्र में निबद्ध करने की प्रज्ञा उत्पन्न कर सके वही उपास्य है। इस तरह से राष्ट्रवादी शिक्षा आदि के माध्यम से राष्ट्रिकों में सूत्रबद्धता और तद्वत सममनस्कता, सहगमन/संगमन भाव पल्लवित किया जा सकता है, किया जाना चाहिए भी।

तथैव, इतिहास की सीख है कि हम राष्ट्रवाद-विमुखता, राष्ट्र-विमुखता या कि राष्ट्रीय संस्कृति से विमुखता के बजाय इस क्षितिज पर सतत जागरूकता का परिचय दें। इसे किसी काण्ड-विशेष से या किसी घटना-विशेष से सम्बद्ध न करें। अच्छा होगा कि राष्ट्र-कल्याण, राष्ट्रीय गरिमा/अस्मिता/इयत्ता के प्रति गौरव-बोध, तद्वत संरक्षा-भावना के साथ-साथ प्रत्येक राष्ट्रिक की राष्ट्र के प्रति सात्मीकरण की भावना को हम 'भारतीय राष्ट्रवाद' के रूप में सतत ज्वलन्त करें।

सर्वांत में कहना होगा यह भी कि राष्ट्र, राष्ट्रवाद (विशेषकर 'भारतीय राष्ट्रवाद' या कि 'भारतीय सांस्कारिक सांस्कृतिक राष्ट्रवाद') के संदर्भ में सम्यक् जागृति न होने के कारण ही प्रो॰ शमसुल इस्लाम, प्रो॰ प्रभात पटनायक जैसे कथित विद्वान् तद्विषयक भ्रम कारित करने में सफल हो जाते हैं और ऐसे ही विभ्रमों से कारित होते हैं ९ फरवरी २०१६ सदृश दुष्काण्ड।

काश! प्रस्तुत आलेख में इंगित निहितार्थों वाले भारतीय राष्ट्रवाद को मनस्येकम् वचनस्येकम् कर्मस्येकम् स्वरूप में साकारित करें और 'राष्ट्रवाद' को पाश्चात्य दृष्टि से इतर भारतीय परिप्रेक्ष्य में 'भा+रतीय' एवं 'भारती+य' राष्ट्रीयता से, भारतीय राष्ट्रिकता से जोड़ कर 'भारतीय राष्ट्रवाद' के रूप में अंगीकार कर लें हम, तो भारतीयता-विरोधी, भारतीय राष्ट्रवाद-विरोधी विभ्रमकारी मानसिकता सिरे से विलुप्त हो जाएगी, वह भी शीघ्रातिशीघ्र।

आधार ग्रन्थ -

१. वाल्मीकि रामायण भाग १ एवम् २ , गीता प्रेस, गोरखपुर
२. ऋग्वेद संहिता भाग १-४, आ॰ श्री राम शर्मा : युग निर्माण योजना न्यास, मथुरा
३. यर्जुवेद संहिता भाग १-२ आ॰ श्री राम शर्मा : युग निर्माण योजना न्यास, मथुरा
४. टैगोर रचनावली : राष्ट्रवाद, सम्पा॰ इंदुनाथ चौधरी : सस्ता साहित्य मंडल, इलाहाबाद
५. भारतीय राष्ट्रवाद: सम्पा॰ डॉ॰ सत्येन्द्र त्रिपाठी, डॉ॰ के॰ डी॰ द्विवेदी : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
६. आज के आईने में राष्ट्रवाद : सम्पा॰ डॉ॰ रविकान्त : राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
७. राष्ट्र सर्वोपरि : डॉ॰ हृदयनारायण दीक्षित : लोकहित प्रकाशन, लखनऊ
८. आध्यात्मिक राष्ट्रीयता का ईश्वरीय सन्देश : श्यामबहादुर वर्मा : अरविन्द प्रकाशन, दिल्ली
९. विकल्पहीन नहीं है दुनिया : किशन पटनायक : राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
१०. आज के आईने में राष्ट्रवाद : रविकान्त : राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
११. आजादी और राष्ट्रवाद : रविकान्त : अनन्य प्रकाशन, नयी दिल्ली
१२. राष्ट्रवाद बनाम देशभक्ति : आशीष नन्दी, अनुवाद : अभय कुमार दुबे : वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
१३. हम भारत के लोग सम्पा॰ पंकज विष्ट : प्रकाशन विभाग, नयी दिल्ली
१४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने : आ॰ श्रीराम शर्मा : युग निर्माण योजना न्यास, मथुरा
१५. हिन्दुत्व की राजनीति : सम्पा॰ राजकिशोर, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
16 - The Contents Of Nationalism : R. K. Chaube : Navchetna Prakashan Varansi
17. Nations And Nationalism : E Geilner : Basil Blakewel
18. Theories Of Nationalism : Smith .A.D. : G . Duckworth ,London
19. Nationalism And State : J Bruicely : Manchester University Press
20. Social Background Of Indian Nationalism : A R Desai : Popular book Depot Bombay
21. Article : Is There a Nationality Question In India : By Achin : Economic And political Weekly

डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार

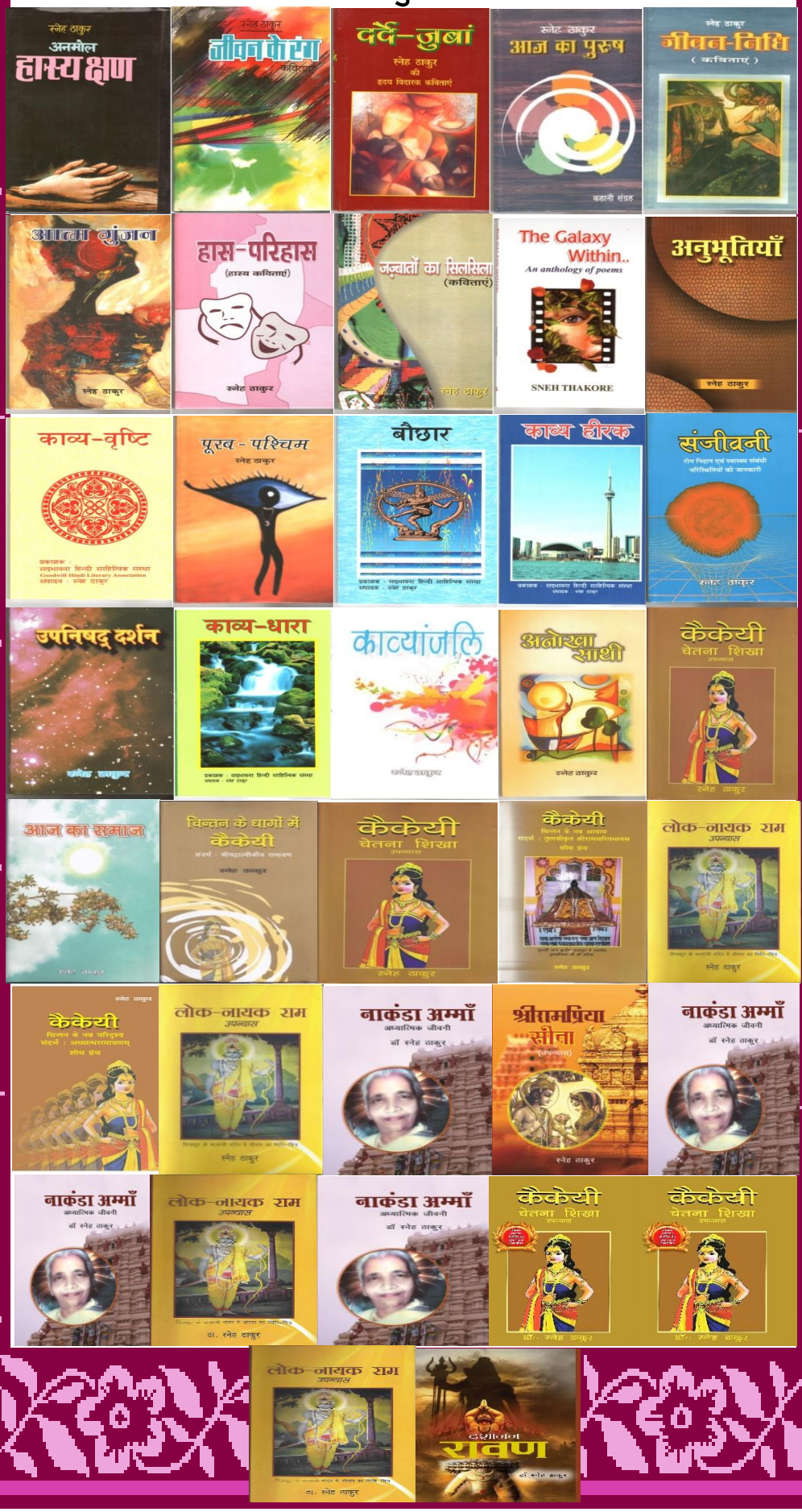

डॉ. स्नेह ठाकुर की प्रकाशित पुस्तकें

दशानन रावण (उपन्यास)
लोक-नायक राम (उपन्यास, चतुर्थ संस्करण)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, चतुर्थ संस्करण)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ (अध्यात्मिक जीवनी, चतुर्थ संस्करण)
लोक-नायक राम (उपन्यास, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ (अध्यात्मिक जीवनी, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ (अध्यात्मिक जीवनी, द्वितीय संस्करण)
श्रीरामप्रिया सीता (उपन्यास)
नाकंडा अम्माँ (अध्यात्मिक जीवनी)
लोक-नायक राम (उपन्यास, द्वितीय संस्करण)
कैकेयी : चिन्तन के नव परिदृश्य - संदर्भ : अध्यात्मरामायण (शोध-ग्रन्थ)
लोक-नायक राम (उपन्यास)
कैकेयी : चिन्तन के नव आयाम - संदर्भ : तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस (शोध-ग्रन्थ)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, द्वितीय संस्करण)
चिन्तन के धागों में कैकेयी - संदर्भ : श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (शोध-ग्रन्थ)
आज का समाज (सामाजिक लेख-संग्रह)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, राष्ट्रपति भवन पुस्तकालय में संग्रहित)
अनोखा साथी (कहानी-संग्रह)
काव्यांजलि (काव्य-संग्रह)
काव्य-धारा (संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
उपनिषद दर्शन (दार्शनिक एवं अध्यात्मिक)
संजीवनी (स्वास्थ्य सम्बन्धी आलेख)
काव्य हीरक (संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
बौछार (संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
पूरब-पश्चिम (आप्रवासी सम्बन्धित आलेख संग्रह)
काव्य-वृष्टि (संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
अनुभूतियाँ (काव्य-संग्रह)
The Galaxy Within (A collection of English poems)
ज़ज़्बातों का सिलसिला (काव्य-संग्रह)
हास-परिहास (हास्य कविताएँ)
आत्म-गुंजन (अध्यात्मिक-दार्शनिक गीत)
जीवन-निधि (काव्य-संग्रह)
आज का पुरुष (कहानी-संग्रह)
दर्दे-ज़ुबाँ (नज़्म व ग़ज़ल संग्रह)
जीवन के रंग (काव्य-संगह)
अनमोल हास्य क्षण (नाटक-संग्रह, फेडरल गवर्नमेन्ट, कैनेडा द्वारा अधिकतम अनुदान से सम्मानित)

प्रकाशक व वितरक

स्टार पब्लिकेशंज़ (प्रा.) लि., ४/५ बी., आसफ अली रोड, नई दिल्ली - ११०००२, भारत
Star Publishers' Distributors, 55, Warren Street, LONDON – W1T 5NW, England
दिल्ली प्रेस की सरिता व अन्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में भी रचनाएँ प्रकाशित

डॉ. स्नेह ठाकुर की प्रकाशित पुस्तकें

दशानन रावण (उपन्यास)
लोक-नायक राम (उपन्यास, चतुर्थ संस्करण)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, चतुर्थ संस्करण)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ (अध्यात्मिक जीवनी, चतुर्थ संस्करण)
लोक-नायक राम (उपन्यास, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ (अध्यात्मिक जीवनी, तृतीय संस्करण)
नाकंडा अम्माँ (अध्यात्मिक जीवनी, द्वितीय संस्करण)
श्रीरामप्रिया सीता (उपन्यास)
नाकंडा अम्माँ (अध्यात्मिक जीवनी)
लोक-नायक राम (उपन्यास, द्वितीय संस्करण)
कैकेयी : चिन्तन के नव परिदृश्य - संदर्भ : अध्यात्मरामायण (शोध-ग्रन्थ)
लोक-नायक राम (उपन्यास)
कैकेयी : चिन्तन के नव आयाम - संदर्भ : तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस (शोध-ग्रन्थ)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र.
अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, द्वितीय संस्करण)
चिन्तन के धागों में कैकेयी - संदर्भ : श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (शोध-ग्रन्थ)
आज का समाज (सामाजिक लेख-संग्रह)
कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास, राष्ट्रपति भवन पुस्तकालय में संग्रहित)
अनोखा साथी (कहानी-संग्रह)
काव्यांजलि (काव्य-संग्रह)
काव्य-धारा (संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
उपनिषद दर्शन (दार्शनिक एवं अध्यात्मिक)
संजीवनी (स्वास्थ्य सम्बन्धी आलेख)
काव्य हीरक (संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
बौछार (संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
पूरब-पश्चिम (आप्रवासी सम्बन्धित आलेख संग्रह)
काव्य-वृष्टि (संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
अनुभूतियाँ (काव्य-संग्रह)
The Galaxy Within (A collection of English poems)
ज़ज़्बातों का सिलसिला (काव्य-संग्रह)
हास-परिहास (हास्य कविताएँ)
आत्म-गुंजन (अध्यात्मिक-दार्शनिक गीत)
जीवन-निधि (काव्य-संग्रह)
आज का पुरुष (कहानी-संग्रह)
दर्दे-ज़ुबाँ (नज़्म व ग़ज़ल संग्रह)
जीवन के रंग (काव्य-संगह)
अनमोल हास्य क्षण (नाटक-संग्रह, फेडरल गवर्नमेन्ट, कैनेडा द्वारा अधिकतम अनुदान से सम्मानित)

प्रकाशक व वितरक

स्टार पब्लिकेशंज़ (प्रा.) लि., ४/५ बी., आसफ अली रोड, नई दिल्ली - ११०००२, भारत
Star Publishers' Distributors, 55, Warren Street, LONDON – W1T 5NW, England
दिल्ली प्रेस की सरिता व अन्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में भी रचनाएँ प्रकाशित